

[Secretary]

of the Rajya Sabha be nominated to serve on the said Joint Committee:

1. Shrimati C. Ammannanna Raja
2. Shri Jaisukhlal Hathi
3. Shri Akbar Ali Khan
4. Shri R. S. Khandekar
5. Shri Debabrata Mookerjee
6. Shri G. S. Pathak
7. Prof. M. Ruthnaswamy
8. Shri P. N. Sapru
9. Shri D. L. Sen Gupta
10. Shri K. K. Shah".

12.27 hrs.

MOTIONS RE: (i) FOOD SITUATION
AND (ii) SITUATION ARISING
OUT OF DROUGHT CONDITIONS
—contd.

Mr. Speaker: We then take up further consideration of the motion on food situation. Out of 15 hours, 4 hours and 15 minutes have been spent; 10 hours and 45 minutes remain.

Shri S. M. Banerjee (Kanpur): I would like to know one thing. We are having the discussion on this motion. Will the Minister reply on the 6th?

Mr. Speaker: Yes. Shrimati Jyotsna Chanda.

Shrimati Jyotsna Chanda (Cachar): I was trying to bring to the notice of the Government that some waste lands were lying in tea garden areas and also in areas managed by the companies. I would request the Government to take steps to bring those areas under the Co-operative Societies Act and bring those lands under cultivation. I would also request the Government to penalise those companies if they do not use those lands. I also like to bring to your notice that, if the land reforms are necessary, Government should resort to

them immediately without any hesitation. I also appeal to the Government that introduction of rationing for the present be made in all major cities and towns to overcome the present shortage of foodgrains. To make it successful, procurement of foodgrains should be made through State Trading and buffer stocks should be maintained in every State to meet the emergency and also to control rise in prices. Government should be more vigilant regarding their stocks. Due to improper care or negligence, foodgrains are wasted in Government godowns as it happened in West Bengal during the last monsoon time. Large quantities of foodgrains are smuggled to East Pakistan also through the borders of Assam, Tripura and West Bengal; I would request the Government to take immediate steps to stop these totally.

Fish farming should also be encouraged and increased supply of spawns should also be made through Government Fisheries at cheaper rates.

Active propaganda to change the food habits of people, especially cutting down of cereals, can be made, but at the same time it is the duty and responsibility of the Government to supply other eatable things in cheaper rates as a subsidiary food.

Government should also take strict measures against the hoarders and blackmarketeers of foodgrains. I would urge upon the Government to give priority to communication along with augmentation of foodgrains; otherwise, movement of foodgrains will suffer and a huge amount will be wasted.

A few years back, during the time of famine in the Mizo Hill District, the Assam Government had to resort to air-dropping to feed the people in that district. A huge amount of foodstuff was wasted by air-dropping. Even now, during the monsoon, foodstuffs are to be carried there and

dropped from air. In view of this, Government should pay more attention to develop those areas which still do not have proper communications with the rest of the country.

We have recently been supplied with a booklet entitled *Reorientation of Programmes of Agricultural Production* by the Food Ministry. I hope the Ministry will follow up the programme in right earnest to increase food production in the country so that we are not compelled to beg from door to door of other countries with a begging bowl and smudge our conscience. At the same time, I would expect that all the Ministries will make co-ordinated effort to make the country self-sufficient. Otherwise, food production cannot be increased successfully to meet the demands of the country.

श्रीमती अज्ञात नंबरी (पातामऊ) :

अप्यक्त बहोदय, देश के अन्दर गवासी प्रतिष्ठत सब से ज्यादा लोख्य किसानों की है। अतः अन्धे या दूरे कामों के परिणाम का असर विशेषतया उन्हीं लोगों पर पड़ता है यह नि-
विवाद है।

पाजारी की एक छास अर्वाच के बाद भी अनुभव करने पर ऐसा लगता है कि देहाती क्षेत्रों में एक मात्र कृषि व्यवसाय पर अधिस्त किसान समुदाय के ही लोग हैं, जो हर स्तर पर शोषण से शिकार हैं। और शोषित होने होते घाब अस्मि पंजर माव अरवशे के रूप में परिवर्तित होते चले जा रहे हैं। ऐसा लगता है मानो उनकी और कोई देखने वाला नहीं है। यह दोष किस पर पड़ा जाए कि अस्त और अतिहान में अटने वाले अन्न दाता अतिहर वर्ग के लोग कारखाना, कबहरी, दुकानदारी, ठेकेदारी आदि में नगे लोगों की अघेला देना-
बन्धा की अघर निरले जा रहे हैं, अर्ज के अघे से दबने जा रहे हैं। सोचा जाए, अिवाचिवासी अघ, अुसलघार अर्वा के नीचे, अरती की अघ, कीच अ में लोट अेट करते हैं। अही लोग काल,

फूल, उत्पादन करते हैं, दूध, दही मकखन, अघ, अेले अघि अघि उत्पादन करते हैं। अरे अमाज की अुराक का सहारा अेते हैं। परन्तु उन्हीं से अीजे अयसर नहीं होती।

शियों के अन्धर कुठ अीडे से लोगों को अघे अर अघिकतर किसानों की अघिअियां अठने के अमाय अुकती जा रही है। उनको अरीजे अड़ती जा रही है। उस पर अर्ज का अघे अड़ता जा रहा है, उनका अीबन अष्टमय होता जा रहा है। वे अ्राह-
तिक अरकोपों के शिकार भी होते हैं। अूखा अौर अाइ अीनों से उन को ही तबाही अड़ती है। कबहरी, अस्तारों, विकास अंठों में अहां भी वे पांव रखे अौर कुठ दिए उनका काम होने को नहीं। उनको अमान अौर अिअसता अौर अघ ती अूट के कारण लभी अरारों पर अीकर अानी पड़ती है।

अघि अर्यक्रम चलू है। सरकारी शालन अौर अंअ मौजूद है। फिर भी अरुगार्ड अरम सीमा अू गयी है। सरकारी अावाअ अिअी के लिए दुकानदारों को दिए जाते हैं, परन्तु अकुतेरे किसानों को अत पर वे अ्राप्त नहीं हो पाते। अोर अाजारी में हर अीअ, सीअंट अौर अू अिल जाते हैं। परन्तु अिअि अूल्य पर लही अौर अकरतमन्ध अ्यकिलयो को नहीं अिल पाते। किरामोन लेल की कमी नहीं। फिर भी अबादा अूल्य अूकाए बिना अर नहीं अिलशा। अस्कर अ्यापाग करने अालों को सामान अिल जाता है, परन्तु किसानों को अिअते अठानी पड़नी है।

किसानों द्वारा उत्पादित सामानों को कीमत मन मने अंअ से निअिअत होती है। कमी कमी अिअिअ से भी अकुत अम होती है। अेकिन अरिअारिक अयपयोगों से लिए अरव किसान अ्यवसाअर्यों के पास अठुअते हैं तो उन्हें लार्वारी में कई गुना ज्यादा अाम देना पड़ना है।

अतिहर अर्ग कृषि उत्पादन को अठाना अाहते हैं, अेकिन लार्वारी की कमी के कारण

[श्रीमती शशांक मंजरी]

बैसा हो नहीं पाता। शहर के मकान बनाने के हेतु सरकारी कर्ज लोगों को मिल जाते हैं, लेकिन कृषि व्यवसाय के लिए कर्ज सुलभतया और आवश्यकतानुसार नहीं मिल पाता समय पर। नतीजा यह है कि जन संख्या के वृद्धि अनुमान से उत्पादन बढ़ा नहीं है।

कृषि के सर्वाधिक महत्वपूर्ण काम खेतिहर मजदूरों के द्वारा सम्पादित होते हैं, लेकिन उनकी हालत अभी दयनीय है। किसानों की इस स्थिति की ओर सरकार का तथा कांग्रेस जैसी संस्थाओं का ध्यान तो जाना ही चाहिए, क्योंकि सारे समाज का श्रेय उन्हीं को प्राप्त है।

बहुत अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि विदेशों के भरोसे में जिन्दगी पालने वाली हमारी सरकार को अब मालूम पड़ा। अब छटपटी हो रही है अन्न उत्पादन के लिए। गमले में गाछ लगाओ, रास्ते में गाछ लगाओ यह कहा जा रहा है। जब राष्ट्रपति भवन के बगीचे में उत्पादन किया जा रहा है तो जितने मिनिस्टर और एम पी हैं उन सब के लान अभी तक क्यों खाली हैं। कुछ भी करें, जब तक घूसखोरी और स्वार्थ नहीं हटेगा, तब तक चाहे गमलों में भी अनाज पैदा हो जाए, फिर भी अनाज की पूर्ति नहीं होगी।

रेडियो में और अखबारों में, हर एक जगह में भाषण दिए जा रहे हैं कृषि और खाद्य का उत्पादन बढ़ाने के विषय में। कैसे अन्न उत्पादन में वृद्धि हो यही खयाल पहले होना चाहिए था, जो अभी कहा जा रहा है। यह सरकार की गलती है। मेरा कहना है कि, इधर तो लड़ाई का आगमन है, उधर अकाल की भयंकर स्थिति। ऐसी हालत में तुरन्त कृषि का सुधार होना मुश्किल है। इस साल हर जगह वर्षा ठीक समय पर न होने के कारण अनाजों में भारी क्षति पहुंची है। कहां तो सूखा है, जहां पानी की सुविधा है, वहां विहन का अभाव है। रुपये का अभाव

है। जहां नल कूप बने हैं वे कहीं कहीं जगह जगह टूट गए हैं। सूखा पड़ा है। जहां पानी की व्यवस्था नहीं, वहां सूखा है, आदमियों को पानी पीने के लिये मिलना मुश्किल हो गया है। ऐसी हालत में इतनी भारी जनसंख्या के लिए अन्न की पूर्ति कैसे हो सकती है। सुधार तो पहले करना था। अपने देश की दयनीय दशा पर तो उस वक्त ध्यान भी नहीं दिया गया। विदेशों से भारी संख्या में मशी वगैरह मंगाई जाने लगी जिसके ऋण का बोझ मालूम नहीं किस जिन्दगी में बसूल होगा।

मंत्रियों के लेक्चर से अनाज पैदा होने वाला नहीं है। इस में वास्तविकता की आवश्यकता है। हां, यह होगा कि अपना फर्ज सरकार बता देगी कि हम ने तो कहा कठिन परिश्रम कर के ज्यादा से ज्यादा अन्न उत्पादन करो और सोमवार को ब्रत करो। कहीं कहते हैं कि मंगलवार को हनुमान जी का ब्रत करो। बिहार के आर्यवर्त में तो महीने में तीन दिन निर्जल उपवास करने के लिए कहा गया है। इस साल तो किसी तरह से काम चल ही रहा है। आने वाले साल—1966—में मालूम नहीं, क्या गुजरेगी। उस वक्त भी यही कहा जायेगा कि एक हफ्ता खाओ और एक हफ्ता ब्रत रखो। तभी अन्न की पूर्ति हो पायेगी।

हमारी सरकार को शांति प्रिय है। सन्यासियों और जोगियों को भी शांति प्रिय है। लेकिन सन्यासी और जोगी दूसरे के आश्रय पर जिन्दगी गुजारते हैं, मांग कर खाते हैं। यही हाल हमारी सरकार का भी है। 1962 में हरेक से सब चीजें मांगनी पड़ीं। अस्त्र-शस्त्र भी विदेशों से मांगने पड़े। आज 1965 में भी वही हालत है।

अब जब कि देश में राशन होने की बात हो रही है, तो अमीरों और मालदारों ने साल

भर का राशन भर कर रख लिया है । इसलिए राशनग से भमीरों को क्या कमी धा सकती है ? राशनग हो या न हो, भमीरों का तो कुछ नहीं बिगड़ेगा । इसका प्रभाव तो गरीबों पर पड़ेगा । उस समय यह कहा जायेगा कि बारह घौस की जगह घाठ घौस खाओ । बेचारे गरीब परिवार के लोग तो मारे जायेंगे, लेकिन भमीरों की दावतें और पार्टियां चलती रहेंगी ।

जब जनता को पेट भर खाने को नहीं मिलेगा, तो लोग परिश्रम कैसे करेंगे ? उस वक्त शांति-शांति कहने से काम नहीं चलेगा उस वक्त चोरी, डाका, लूट-मार, घूसखोरी सब बढ़ जायेंगे ।

इसलिए मेरा कहना है कि भमरीका से पी० एल० 480 के अन्तर्गत जो भनाज मिल रहा है, उसको ले लेना चाहिए । राजनीतिक शर्तें पर अन्न न सही, कर्ज के रूप में ही ले लिया जाये । कर्ज तो पहले ही सिर पर है । एक घौर कर्ज सही । इस प्रकार 1966 का वर्ष तो गुजर जायेगा, बाद में ईश्वर मालिक होगा ।

श्री ब्रज बिहारी महरोत्रा (बिल्होर) :
अध्यक्ष महोदय, लोक सभा के प्रत्येक अधिवेशन में खाद्य स्थिति पर चर्चा होती है । इस अधिवेशन में भी कल से इस विषय पर चर्चा चल रही है । यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि हमारे देश में इस बार ठीक से वर्षा नहीं हुई है । जिसका नतीजा यह है कि खरीफ की फसल की सम्भावनायें बिल्कुल निराशाजनक हैं, पिछली रबी की फसल जितनी अच्छी हुई थी, उस से हम का घोड़ा संतोष हो गया था, लेकिन उसके बाद वर्षा न होने के कारण खरीफ की फसल एक-चौथाई भी होने की आशा नहीं है । जो घोड़ा बहुत धान और मक्की आदि हुए हैं, वे नाकाफ़ी हैं । रबी का एरिया बढ़ गया है । लेकिन बरसात न होने के कारण रबी के आसार नजर नहीं

धा रहे हैं । इस बारे में मंत्री महोदय ने जिस बात की तरफ संकेत किया है, उस पर हमें खबर सार करना चाहिए ।

सरकार ने इस मामले पर कमी भी गम्भीरता के साथ धौर दूर की पालिसी बना कर विचार नहीं किया है । अगर उसने कृषि उद्योग को प्राथमिकता दी होती, तो हम निश्चित रूप से इस मुसीबत को टाल सकते थे, खास तौर पर इसलिए कि पिछले इतने वर्षों से हमारे देश में कांग्रेस का शासन रहा है । लेकिन आज भी हमारा वही नजरिया है कि हम दूसरे लोगों के सहारे इस मामले को हल करना चाहते हैं । आज भी हम कृषि की उपज बढ़ाने के लिए फर्टिलाइजर—धौर वह फर्टिलाइजर, जो किसी फैक्टरी, से निकले—पर निर्भर करना चाहते हैं । हमारे देश में इतनी बड़ी मात्रा में जो फर्टिलाइजर चून्हे में झोंक दिया जाता है, उसको काम में लाने के लिए कोई इन्तजाम नहीं किया गया है । आज तक गोबर गैस के प्लांट बना कर खाना बनाने की समस्या को हल करने का कोई उपाय नहीं सोचा गया है धौर न ही यह सोचा गया है कि कैसे गोबर का उपयोग करके कृषि का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है ।

कैमिकल फर्टिलाइजर उकर एक अच्छा उर्वरक है, लेकिन उसके लिए पानी का होना आवश्यक है । अगर पानी उपलब्ध नहीं है, तो यह उर्वरक तो खेत के लिए उहर हो जाता है, फसल के लिए उहर हो जाता है । आज पानी की यह हासत है कि न भगवान पानी देते हैं धौर न नहर से पानी मिलता है । गंगा नहर का जो रोस्टर मिला है, उससे मानूम होता है कि महीने में केवल एक हफ़ता पानी दिया जायेगा । क्या केवल एक हफ़ते पानी देकर रबी को बचाया जा सकता है ? मैं नहीं समझता हूँ कि इससे रबी बचेगी । फिर पानी पूरी पनसाय में नहीं दिया जाता है ।

[श्री ब्रज बिहारी मेहरोत्रा]

दूसरी कठिनाई यह है कि यहाँ पर तो कृषि मंत्री और खाद्य मंत्री एक हैं। लेकिन राज्यों में कृषि मंत्री भ्रलग हैं, खाद्य मंत्री भ्रलग हैं, सिंचाई मंत्री भ्रलग हैं और उनमें इस बारे में कोई सामंजस्य नहीं है कि किस तरह पानी कृषि-उत्पादन के लिए किसान को मौके पर मिल सके।

किसान को डबलरत होने पर पैसा भी नहीं मिलता है और जब तक किसान को वक्त पर सस्ते ब्याज पर कर्जा नहीं मिलता है, तब तक कृषि के उत्पादन में कोई सफलता नहीं मिल सकती है। बड़े-बड़े सम्पत्ति वाले लोगों को, बड़े-बड़े धनिकों को, खाद्य का उत्पादन करने के लिए बिजली, पानी, मशीनें और मशीनों को मंगाने के लिए फ़ारेन एक्सचेंज प्रादि सब साधन दिये जाते हैं, तो फिर किसानों के क्या अपराध किया है कि उन्हें वक्त पर सस्ते ब्याज पर पैसा नहीं मिलता? मेरा विश्वास है कि अगर हमारे छोटे-छोटे किसानों को वक्त पर सस्ते ब्याज पर सफ़ा मिले, पानी मिले, बीज मिले और जो खाद बर्बाद होती है, उसको बचाने का इन्तज़ाम किया जाये, तो वे लोग अपने खेतों में दो-दो, तीन-तीन फ़सलें पैदा कर सकते हैं।

हमारे बड़े-बड़े शहरों को भ्रज चाहिये। भ्रज वहाँ पहुँचता है और उस के लिए सरकार राशनिंग की व्यवस्था कर रही है। लेकिन मैं जानता हूँ कि ऐसे शहर भी हैं, जहाँ सियुभर से निकलने वाला मल-मूत्र खेतों में न जा कर गंगा, जमुना प्रादि नदियों में डाला जाता है।

12.46 hrs.

[MR. DEPUTY-SPEAKER in the Chair]

भ्रज देहात में भी यह हालत हो गई है कि सैण्टिक टैंक बना कर वहाँ भी मल-मूत्र बर्बाद किया जा रहा है और वह खेतों में नहीं जाता है। मेरी समझ में नहीं आता है कि हमारे

देश में भ्राज यह क्या हो रहा है। एक तरफ़ तो हम फ़र्टिलाइजर के मोहताज हैं और दूसरी तरफ़ फ़र्टिलिटी के जितने साधन हैं, वे सब बर्बाद किये जा रहे हैं। मैं मंत्री महोदय का ध्यान इस ओर भ्राकषित करना चाहता हूँ और चाहता हूँ कि वह कृषि के विशेषज्ञों से इस बारे में परामर्श करके कोई रास्ता निकालें।

यह डबलरी नहीं है कि हम खाने के लिए केवल भ्रज पर ही निर्भर रहें। हमें बड़ी ध्रासानी से मुर्गी-पालन, पिग्गरी और मत्स्य-पालन को प्रोत्साहन दे कर दूसरी चीजों का उत्पादन भी बढ़ा सकते हैं। हम में से जो लोग ध्रामिवभांजी हैं, वे इन चीजों से ध्रपने खाने को ध्रज्जीमेंट करके ध्रपने हिस्से का कुछ भ्रज बचा सकते हैं।

माननीय ध्रात्री जी ने यह नारा दिया है कि सप्ताह में एक बार खाना न खाया जाये। यह नारा बहुत भ्रच्छा है, लेकिन यह केवल उन सफ़ेदपोशों के लिए है, जो दोनों व्रत खाना खाते हैं और भ्रच्छा खाना खाते हैं। लेकिन हमारे देश की 87 फ़ीसदी ध्राबादी देहातों में रहती है और देहात में बहुत से घर ऐसे हैं, जिनमें दो व्रत खाना नहीं बनता है। कल माननीय सदस्य, श्री गहमरी, ने ठीक ही कहा था कि देहात में बहुत से घर ऐसे हैं, जहाँ एक ही व्रत खाना बनता है। मैं इन समस्याओं की ओर मंत्री महोदय का ध्यान भ्राकषित करना चाहता हूँ। किसानों की जो डबलरी मांग है वे पानी की है। अगर पानी की व्यवस्था ठीक से हो जाए तो यह जो भ्रज को कमी हूँमें दिखाई देनी है यह बहुत हद तक पूरी हो सकती है। इस कमी को हम बहुत ध्रमानी से पूरा कर सकते हैं। ध्राप कहेंत है कि दम फ़ीसदी की कमी है। लेकिन यह कमी ऐसी नहीं है जोकि पूरी हो न की जा सकती हो। मैं ध्रापको ध्रपने क्षेत्र की बात बतलाता हूँ। वहाँ पर गंगा की नहर

जाती है। उसका पानी मेरे इलाके को लगता है। अगर वक्त पर पानी मिल जाता है तो सबकुछ दो-बो-घोर तीन-तीन फसलें बहानों पर लोग कर लेते हैं। अगर पानी समय पर दे दिया जाए घोर जितने पानी की आवश्यकता हो उतना दे दिया जाए तो तीन-तीन फसलें करना मुश्किल नहीं होना चाहिये। सरकार को चाहिये कि वह कुछ खुदवा कर पानी की व्यवस्था करे। अगर पानी के लिए बड़े बड़े बांधों पर ही निर्भर रहे तो इससे काम चल नहीं सकता है, इससे जितनी प्रापकी समस्या है वह शीघ्रहल होने वाली नहीं है। प्रापको चाहिये कि प्राप पक्के कुएं बनवा कर उनके लिए बिजली की व्यवस्था करे। तब यह जो समस्या है इसका समाधान बहुत आसान हो जाएगा।

इन कुओं के लिए प्रापको चाहिए कि प्राप बिजली भी दें। देहातों में बिजली दी तो ब्या रूही है लेकिन बहुत धीरे-धीरे दी जा जाती है। वहां तेजी से बिजली पहुंचाई जानी चाहिये। कंसलटेंटिव कमेटी में मैंने इस प्रश्न को उठाया था। मैंने माननीय बिजली मंत्री से कहा था कि देहातों में बिजली पहुंचाने की व्यवस्था की जाए। इससे न केवल वहां उद्योग धंधे स्थापित होने में सहायता मिलेगी बल्कि कृषि उद्योग में भी सहायता मिलेगी। घोर प्राप की पैदावार बढ़ सकेगी। उन्होंने इसके उत्तर में यह कहा कि देहात के लोग पैसा दें तो ऐसा किया जा सकता है। इसके लिए उन्होंने प्रलय से पैसे की मांग की। प्रथम प्राप देखें कि प्रब देहात के लोगों को बिजली देने की बात आती है तो प्रलय से उन से पैसा देने की मांग की जाती है लेकिन शहर वालों को जब बिजली देने की बात आती है तो कोई प्रलय से पैसे की मांग नहीं की जाती है और उनको बिजली सस्ती भी दी जाती है। यह दो तरह की नजर क्यों? ऐसा भेदभाव क्यों? शहरों को तो प्राप एक दृष्टि से देखते हैं लेकिन देहातों को दूसरी ही दृष्टि से देखते हैं। शहर वालों के लिए एक तरह का बरताव

घोर गांव वालों के लिए दूसरी तरह का बरताव, यह तो प्रच्छी बात नहीं है। उसी तरह से बिजली के रेट की बात है। शहरों में लगे हुए उद्योग धंधों को सस्ती बिजली दी जाती है जबकि देहातों में कृषि उद्योग के लिए सस्ती बिजली की जब मांग होती है तो कहते हैं कि उस मांग को पूरा नहीं कर सकते हैं। प्रगवान के नाम पर सोचें कि सस्ती बिजली किसे देनी चाहिए। जो पैसा बिदेसों से प्रभ्र मंगाने पर खर्च करते हैं अगर वह पैसा प्रनुदान देने में खर्च करें, बिजली सस्ती देने में खर्च करें तो मैं समझता हूँ कि प्रभ्र की समस्या हल हो सकती है। बिजली की उपलब्धि बढ़नी आ रही है, यह सही है। लेकिन गांवों में बिजली धीरे-धीरे पहुंच रही है। निज के जो कुएं लगाते हैं उनके लिए भी बिजली देने की व्यवस्था करनी चाहिये और सस्ती दरों पर देने की व्यवस्था करनी चाहिये। मैंने पता लगाया है और मुझे पता चला है कि केन्द्र के जो सिंचाई मंत्री हैं उनके हाथ में बिजली तो है लेकिन ट्यूबवैल उनके हाथ में नहीं हैं। यह क्या मजाक है, समझ में नहीं आता है। किन्हीं राज्यों में बिजली एक के हाथ में और पानी किसी दूसरे के हाथ में। जिन के हाथ में पानी है वे पानी भी वक्त पर नहीं पहुंचाते हैं। इस तरह की जो शिकायतें हैं इनकी तरफ सरकार का ध्यान जाना चाहिये। अगर इन बातों की तरफ ध्यान नहीं दिया जाएगा तो जो शिकायतें हैं वे बनी रहेंगी और यहां पर इस विषय पर बहस का क्रम इस तरह से चलता रहेगा और यह जो समस्या है, यह हल नहीं होगी। इसका अगर प्राप चाहते हैं कि कोई हल निकले तो उसका उपाय यह है कि इन सारी बातों पर प्राप गौर करने और गौर करने के बाद कोई रास्ता निकालें ताकि कृषि के उत्पादन को बढ़ाने के लिए जिन माधनों की आवश्यकता है उनकी पूर्ति हो सके। प्रापको देखना होगा कि किस तरह में गांव का हम खाद के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं, खेतों में पानी पहुंचाने की घोर समय पर पहुंचाने की किस प्रकार से व्यवस्था की जा सकती है,

[श्री इज बिहारी मेहरोत्रा]

हरी खाद किस तरह से पैदा की जा सकती है ताकि कृषि में उसका उपयोग करके उत्पादन को बढ़ावा जा सके। अगर हम ऐसा कर दें तो हमें फर्टिलाइजर के लिए अपनी फील्डों पर या विदेशों पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा, उनका मुहताज नहीं होता पड़ेगा। अगर हम इसके लिए अपनी फील्डों या विदेशों पर निर्भर रहेंगे तो सारी की सारी हमारी समस्या बँसी को बँसी बनो रहेगी।

कृषि बरबाद करने वाले जो जन्तु है, उन से भी हमें कृषि की रक्षा करनी चाहिये। चूहे बढ़ रहे हैं, बिड़ियों का हमला होता रहता है, नीलगाय, बन्दर घोर सुमर इत्यादि फसलों को बरबाद करते रहते हैं। इनसे प्राणको चाहिये कि प्राण फसलों को रक्षा करने की व्यवस्था करें। बन संरक्षण योजना प्राणने जागू कर रखी है, बनों का संरक्षण तो प्राणने कर रखा है लेकिन उसके साथ साथ प्राण यह भी देखें कि प्राणने उन बनों में डाकू घोर सुमर पाल रखे हैं जो बँसों को धराव किया करते हैं।

गावों में तानाबों की व्यवस्था भी प्राण करे। वहाँ पर मत्स्य पालन भी हो सकता है घोर सिंचाई के काम में भी उमका पानी घा सकता है। मछली उद्योग को भी प्राणको प्रोत्साहन देना चाहिये। गहरे समुद्र में मछलियां पकड़ने का भी इंतजाम होना चाहिये। ये सब चीजें हमें खाद्य की समस्या को हल करने में सहायता दे सकती हैं।

इन शब्दों के साथ मैं प्रार्थना करता हूँ कि प्राणने अपने प्रयासों में कायाबली मिले घोर जो प्राणा प्राणने की है वह प्राणा प्राणकी पूर्ण हो।

Shri Dinesh Bhatnagar (Serampore): Two have spoken from the other side. When will we get a chance?

Mr. Deputy-Speaker: Only one has spoken.

Shri Veeranna Gowda (Bangalore): I am very happy that the Food Minister has made a very practical statement in the House yesterday. He has taken a realistic view of the conditions prevailing in the country with regard to this important matter.

While appreciating the statement for being practical and useful and for comprising ideas and suggestions about this matter, I want to express the view that unless these useful suggestions are translated into action, they will remain only a pious hope. These ideas and suggestions have been before the country all these years. Statements have been issued and Ministers have made speeches about this matter, but in my experience these things have not been implemented as yet.

Recently I had an opportunity of touring the greater part of my constituency and personally found the harrowing conditions facing the people in those areas. People have no food to eat, no water to drink, the cattle have no fodder. People are wandering to search of food and work. In the rural areas the people are poor, but they are a very proud people; they would rather starve than beg for food. So, they are leaving their houses, abandoning even their women and children to shift for themselves, in search of food and work. Wherever they go, there is no work.

The Mysore Government is doing its best by way of providing work for these people, but what they are attempting to do is only a drop in the ocean. They have sanctioned about a couple of lakhs of rupees for each district, whereas they require at least a couple of crores for each district. Therefore, the request of the Mysore Government to sanction Rs. 20 crores to provide adequate work for these people should be immediately granted. I was happy to read in the note that was distributed to the Members of the House that the Union Government was sympathetically considering the request of the Mysore Government.

With regard to food, the fair price shops and co-operative societies are not adequately supplied, so that all people who need the rations could get them. Therefore, immediate attempts should be made to rush whatever food is available to Mysore, so that the difficulties may be got over.

13 hrs.

With regard to cattle, even now one can see in the evenings hundreds and thousands of cattle being driven on the roads in search of fodder. Cattle are sold very cheap. A pair of bullocks which would cost about Rs. 400 to Rs. 500 is now available for less than Rs. 200. Goats and sheep also have become very cheap. A goat or a sheep which would cost Rs. 40 to Rs. 50 is now available for Rs. 10 to Rs. 15. Mutton which used to cost Rs. 4 to Rs. 5 per Kg. is now available for Rs. 2 or even less. Such is the condition. In some of the villages I was told that the cattle are being driven out of the houses, so that the people may not see their cattle die before their very eyes for want of fodder. Therefore, I was surprised to read in the note that is supplied to the Members of the House that no State Government has asked for fodder. I really wonder why the Mysore Government is silent about this matter, for in Mysore thousands of cattle are on the verge of starvation, are being sold, and goat and sheep are being killed for food. Therefore, I would request the Government to arrange for supply of fodder also to Mysore State. This selling of cattle at cheap rates and the killing of goats and sheep will confront the ryots with a grave situation in the near future; when the rains fall there would be no cattle to plough and there would not be any sheep or goat so that we could get some manure for the fields. The middle class ryots were encouraged to mechanise their farming methods, and some people have been trying to buy small tractors. The tractors manufactured in various foreign countries are very costly. We would not get one for less than Rs. 15,000 to Rs. 30,000. But

the Russian tractors cost a little less. A 14 h.p. Russian tractor costs about Rs. 6,000 and a smaller one will cost about Rs. 4,000. I am told—I do not know whether it is a fact—that the dealers of Russian Tractors in India are asked to add Rs. 4,000 more per Russian tractor and keep that amount in a separate account and submit monthly accounts to the State Trading Corporation, and that amount is meant—that is what I am told—to subsidise the indigenous manufacturers of tractors. Now, the tractor which I could get for about Rs. 6,000 would cost about Rs. 10,000 now, and that is to help the local manufacturer of tractors. It is not a correct policy, that these people should be burdened with another Rs. 4,000 extra. You know, Sir, there is a Kannada proverb which when translated means “kill the snake to feed the vulture.” That is what is going to happen if this sum of Rs. 4,000 is added to the price of each Russian tractor. As I said, I do not know whether it is a fact; if it is not a fact, I shall be very happy. But, if it is a fact, I request the Government to look into the matter and see that in the name of helping the indigenous manufacturer, the middle class ryots are not taxed heavily.

The Mysore Government have recently passed an order that the D.Cs. are empowered to decide and ryots which crop they should raise on their fields. In the absence of a crop planting law, this will harass the people to a great extent. That is my experience because there are D.Cs. and D.Cs.; some of them may not know exactly what is agricultural science. In their own way they may ask the people to raise a crop which is not suitable for that particular land. Why I say this is, very recently, a co-ordinating officer at the State level did not believe that a well on an empty tank-bed or on the side of a river could be dug within three or four months. According to him, it would take about two to three years, and the cost would come to about Rs. 5,000. An experienced agricultur-

[Shri Veeranna Gowth]

lat or a man in the rural areas knows that these temporary mud wells, 10 to 15 feet deep, could be dug within 20 days or in a month or two and at not more than a cost of Rs. 500. I say this because these inexperienced officers who do not know the rural life, who do not know the agricultural conditions, are called upon to advise the people. I therefore suggest that the only experienced officers should be entrusted with such programmes of work.

There is an army of workers in the rural areas. The officers belonging to the co-operative department, the agricultural department, the development department, and officers such as the P.D.Os. and others. According to my knowledge and experience, these officials are doing precious little in the matter of practically assisting the ryots and rendering them help. These officers, such as the B.D.Os. and others are moving about in the villages in jeeps supplied by Government and it is universally said in the rural parts that instead of calling them B.D.Os., they could be called cigarette, because they only smoke cigarettes and move about and they are not in touch at all with the rural folk.

13:05 hrs.

[SHRIMATI RENU CHAKRAVARTY in the Chair]

I would urge upon the Government to whip up these people and ask them to get into touch with the rural folk and enter their fields and take them into their confidence and suggest to them ways and means of getting over the present difficulties; especially the programme that has been placed by the Food Minister before this House has to be tackled in all seriousness.

Shri Alvares (Panjim): Mr. Chairman, for the last many years the Government has been seeking shelter behind the caprice of the Indian monsoon. It is an obvious fact that India is always a deficit country with respect to food, even though the failure of a particular monsoon may aggravate the situation. There are other countries that suffer from the vagaries of the monsoon such as India does, but in the course of years, they have worked to ensure themselves against this possibility and have seen that food does not depend so much upon natural resources as upon man-made insurance. The paradox, however, is that the more developed countries have a better production of food supply than the under-developed countries. In the conference that the Food Minister attended last week in Rome, Mr. Sen, the Director-General of the FAO, has drawn attention to the low production of under-developed countries, which has gone down by 25 per cent. This is the malady that under-developed countries suffer from and it is not peculiar to India. In all under-developed countries, which have seen colonial rule through more developed countries, there is always a residue of a colonial mind, namely, that industrialisation must take precedence over agricultural production. In all such countries such as Russia, Yugoslavia, India and China, agricultural production has suffered because of the high priority and predominance given to industrial production. It is only at a later stage, because of the fact of food shortages, that men like Khrushchev in Russia and Tito in Yugoslavia have reversed the process of priorities and started giving attention to agricultural production. Our planners did not take the lesson of history and the result is that we depend so much upon the monsoon. We depend so much upon more industrial production that the rural sectors of the economy are left entirely neglected. That is the reason why the failure of an agricultural policy primarily brings about a repetitive occur-

rence of food shortages. I am sure that if a policy was evolved by which large tracts could be carefully nurtured, for instance, with the availability of water-supply, of making available good fertilisers, with a real price-policy, and an agricultural social arrangement, we would have been able to get over these repeated shortages and India could be well on the road to self-sufficiency.

The first essential, I would say, is to come out with a national food budget, showing how much there is, how much do we require. At the present moment, the ration of 12 ounces is proposed to be increased to 18·3 ounces in 1970-71. Whenever this Government is in a difficulty, it always holds out the prospect of what we will get five years hence, neglecting the situation that is facing us today. I am sure, Madam Chairman, that the Indian people, and this House, will not be taken in by such promises. We have to know what the position is today so that we can draw up a national food budget for the moment, that is today, and in relation to the national food budget we can also arrange a national agricultural market. Unless there is a uniform agricultural market in this country, whatever you try to do will not be possible, because these two are inter-related concepts, a national food budget and a national agricultural market, so that one works in conjunction with the other.

The Food Minister, yesterday, when speaking on his motion, said that the deficit would be in the nature of 8 million tons. Now, as I say that this deficit is comparable to normal deficits, even when the monsoon is rather favourable, I want to know from the Food Minister what he proposes to do to work out in the next few years a national food budget so that we are able to find out what are the necessary inputs that we have to invest, and what are the outputs that will come about, and on the composition of these various components of inputs and outputs we have to find out what he thinks about them.

Let us take the question of water. Many years ago when Albert Einstein was asked his opinion about the atom bomb and the dangers inherent in it, he said he was not so much worried about the devastating effects of the atom bomb because man was too selfish to destroy himself, but he said that a real danger came from the receding water table. The receding water table is receiving the attention of the scientists. In India the experience is there. It is evident from the fact that we are looking to deepen the wells that have been dug. We want to energise the tubewells. This receding water table, for some reason or the other, has not occupied the attention of the Government. Rather than depend upon the monsoon and the dams for consequent irrigation, the Government should make us independent of the monsoon by a programme of having one tubewell at least in every village. The monsoon has its vagaries. These vagaries are further dependent upon the storage of water for hydel purposes. If monsoon fails, not only do irrigation facilities fail, but also the dependency upon power is limited so much. Can we not arrange a programme by which this country while accepting the blessing of a good monsoon is independent of it? The Minister of Irrigation and Power, fortunately, is here. He knows, as well as others do, that this phenomenon of a receding water table will harass this country as it is harassing other countries. Therefore, we must pay attention to water. Without the input of water, which is the most important, there cannot be any agricultural production. Therefore, the first point, they must evolve a firm policy about, is the question of water. Water must be supplied cheaply, water must be supplied in abundance, and unless the Government evolve a policy of independence of water, free from the abundance or the vagaries of the monsoon, agricultural production can never be assured.

The next point is the question of fertilisers. The story of fertiliser is that whereas India uses one pound of

[Shri Alvares]

fertiliser per unit Japan uses 20 pounds of fertiliser. Japan uses 20 times as much as India and therefore, naturally, Japan is able to produce so much of crops per year on one acre of land.

This brings me to the controversy of whether to extend the area of cultivation or to limit it to intensive cultivation. The world average is 12 per cent of the total area of the land for cultivation. That is supposed to be the optimum. Japan has 15 per cent of the total area under cultivation. In contrast, India has 45 per cent of the total area under cultivation. One can, therefore, draw the conclusion that whatever we put in in the form of fertiliser and water, there is such a dissipation of resources, such a dissipation of inputs, that we are not able to get out the maximum out of the land. There is also a controversy going on and there has been a discussion on this issue, whether to bring in more area under cultivation. I am opposed to this suggestion. Already we have three times the world average. If 15 per cent of the total area under crop is considered the optimum taking into consideration the number of inputs—fertilisers, water etc.—I am sure we shall opt for a more intensive form of cultivation where in selected areas Government can produce crops which will have a high-yield potential than in other diversified or extensive forms of cultivation.

There is a third and very important input, and that is an agricultural arrangement as far as the peasant is concerned. The issue of agriculture is important. Whatever incentives are given to industry, they affect only a small section of our community. The agricultural sector covers more than 50 per cent of our population, more than 60 per cent of our national income. Neglect of the agricultural sector would mean neglect of 60 per cent of our total income. Therefore, no national income, no per capita income, can increase so long as the

Government does not pay prior attention to the agricultural sector. We talk of economic growth. The Government calculates economic growth merely on industrial growth. If more than 50 per cent of the population contribute to more than 60 per cent of the national income of our country, it is obvious that these 50 per cent of the population are tied down by a neglect of the agricultural policy, and the sooner the Government pays attention to it the better. Reference has been made to the tardy land reforms taking place. Social stagnation naturally results because of this slow process of re-arrangement of our social economy. Therefore, if this third input—the first being water and the second being fertiliser—of re-arrangement of the agricultural pattern is there, I am sure the other desiderata can be taken care of.

Let me now think of the fourth one—the question of prices. Price is very important. Here, in India, we have neglected it. We have a paradoxical situation where extra production puts the producer in a difficulty because he does not get the fair prices, while if there is a short supply according to the market mechanism the prices should rise and he is still in the same position because none of the conditions of a market mechanism reach him or benefit him. In progressive countries, in Europe, the Government takes care of such a situation. In England, in America, in Japan, and other countries where the market mechanism works, the Government either subsidise food or it helps the agriculturists by giving them support prices. President de Gaulle is prepared to risk the entire future of the European Economic Community just because he wants a higher price for his agricultural products. If an industrial nation can pay so much attention and devote so much anxious concern to the future of agricultural economy, it is obviously necessary for this Government to make more efforts.

We have the report of the expert committee that met at Vijayanagar somewhere late last month to decide about this question of support prices. They have recommended three prices—minimum support price, purchase price and market price. So long as you accept the theory of the market mechanism that determine the purchase price and the selling price, it is all right. But we have the experience of a market mechanism and that plays havoc into our economy, food as well as production. Therefore, I would not agree that these three prices should be there. At the most I may suggest that the minimum support price and the purchase price should be combined into one, and a market price should be accepted separately. Shri Pai has stated in a statement released in Bangalore that he would like India to adopt the Japanese method of monopoly procurement. If you have, as it was originally intended, a policy whereby the Food Corporation would adopt a policy of monopoly procurement as in Japan, the range of three prices, the minimum support price, the purchase price and the market price would be irrelevant because one agency would purchase the entire stock that is brought into the market. In order to prove this we have the experience of how the prices fluctuated in the last four months. In spite of the bumper crop last year, the stocks did not go into the market because of anticipation of higher prices; when the policy was announced by Government that they would procure foodgrains and introduce rationing, in a situation like that where the prices should have gone up to a high degree, the prices actually had not shot up as they should have. The statistics supplied by the Government of India have proved that prices have risen but with a certain amount of restraint. This phenomenon, this paradox, is only explained by the fact that hoarders take advantage of situations, hoping to profit thereby at a more favourable opportunity. And when they see that this opportunity will

not be available because of the monopoly procurement policy of Government, stocks are released in the market at prices which are lower than that could be anticipated. This only goes to prove that the three tier policy of minimum support price, purchase price and a marketable price is unnecessary in this country. If the Government wants, they could have a support price. Therefore, I would again refer to the statement made by Shri Pai where he says that the policy of the Food Corporation is hamstrung in this respect, because the function of the Food Corporation is intimately linked with the question of prices. Shri Pai says that the Corporation was not allowed to function even as an ordinary trader in some States. He has stated:

“The concept of a food procurement and marketing organisation had not gained the approval of these States but he had been able to convince some of them about the utility of the Corporation in a limited field.”

While speaking on the debate on the Food Corporation Bill I had stated right at the beginning that though the setting up of the Food Corporation was a welcome venture it has been hamstrung and not allowed to play its part effectively. The Chairman of the Food Corporation of India is corroborating what I said some six months ago. The statement says:

“Mr. Pai, who envisaged the total turnover of the Corporation this year to exceed Rs. 250 crores conceded that the figure could have been higher if only the Corporation did not continuously face ‘a problem of attitudes in many States.’”

That is the crux of the problem. How can you have a price policy unless you have a unified agency? If you have two or three parallel agencies, it is obvious that the prices could not be controlled and some of the States, like every private trader, will try to take advantage of this situation.

[Shri Alvares]

Let us look at what Government has done in the range of prices for sugarcane. This is an example how the Government, while not interested in giving a support price to the grower, is very anxious to give a certain support price to the sugar industrialists. During the last five years the Government has given a subsidy of something like Rs. 34.46 crores for the export of sugar. I have not come across any instance in which this Government has shown such an anxiety on behalf of the grower. The growers have been asking for a better price but, in spite of this, in order to be able to earn a certain amount of foreign exchange, the Government has given a subsidy to the sugar industry for the last six years of Rs. 34.46 crores. Again, if you look at the imports under PL 480, which unfortunately are very necessary today at a time of food crisis, though we must look ahead to a period of self-sufficiency, Government has poured its 927 crores into the pockets of the American farmer. What portion of this money represents the real purchase price there I do not know. Everybody knows that the American Government gives support price to the American farmer. If a portion of this Rs. 927 crores paid to the American Government under PL 480 funds alone could have been given as incentives to the Indian farmers, I am sure the picture of agricultural production in India would have been different.

There are just two points that I will refer to before I conclude. One is the question of distribution. As important as production, as important as price support is the question of distribution. These are such inter-related problems that it is not possible to discuss them absolutely in isolation. The distributive process in the country is in the hands of the traders and they hold up stocks. Therefore, if we have monopoly procurement, if we take the stocks away from the millers who are the normal channels through which the private

traders buy their grains, I am sure that the distributive process can also be controlled by the Government. There is no point in giving support price, there is no point in monopoly procurement if we leave the distributive process entirely in the hands of the big distributors. Therefore, I would favour the system by which the Government having secured monopoly procurement, to the extent it is possible, should be able to leave the distributive process, as far as retail distribution is concerned, in the hands of the retail trade. It is not possible for the Government machinery to undertake the distributive process at the retail level. Therefore, I would suggest that, as far as retail distribution is concerned, Government should use the existing machinery that is there, including the progressive role of the co-operatives in order to bring about this distributive process.

Finally, I would like to say this. The Agricultural Prices Commission has warned us that we shall have to live with the difficulty of food for the next ten years. Ten years is a long period. Within ten years, as somebody said this morning, there is going to be malnutrition, there is going to be slow starvation and our defence potential will naturally be affected and we shall not be able to do what the people expect of us. The Javans have done a good job on the front and we must do an equally good job on the home front. And of all the jobs that we can, the responsibility on the agricultural front is the most important. Within these ten years many things will happen. We will progress in many spheres. War is a catalyst. We must take advantage of the unwitting opportunity that Pakistan has given us through this aggression to bring about a transformation in our economy. We cannot wait for ten years to achieve self-sufficiency in food. War gives momentum to history, as Lenin has said. Therefore, we must telescope the progress of the next ten

years into five years so that this country can be self-sufficient as soon as possible, and as a result thereof the agricultural economy can be rehabilitated.

Mr. Chairman: Shri A. C. Guba. He will have 12 minutes. We have to accommodate more Congress members.

Shri A. C. Guba (Barasat): Mr. Chairman, the situation on the food front is not only grave but it is almost critical. Reports from practically every State indicate that there is near-famine condition prevailing all over India. In such a situation the immediate problem which should engage our attention is the distribution of whatever foodgrains we may have in the country. And for distribution the main thing necessary is procurement. The difficulty is that the Government machinery first for procurement, and then for distribution, is not adequate. Last year when the situation was not so much acute, even then the achievement was short of the target by 3 lakhs tons in the matter of procurement. As against a target of 19 lakhs tons Government could procure only 16 lakhs tons of rice. This year when there has been a huge shortfall in the kharif crop and rabi crop prospect is also very gloomy. I do not know whether it will be possible for the Government to procure enough foodgrains to maintain their rationing policy, which at present they have initiated only in towns with a population of one lakh and above, all over the country.

I think Government should give priority attention to the question of procurement and then build up a system of distribution. In September, 1964, we were told in a Government report:—

"Government have, therefore, decided to set up a Foodgrains Trading Corporation to function on strictly commercial lines to purchase, store and sell foodgrains."

Since then it is more than one year, but as yet the Foodgrains Corporation has not started functioning in its full force or with full implication in all the States. If the Government machinery, even in such an emergency state, moved so slowly, it would be very difficult for the Government to maintain the rationing system and the break-down of the rationing system may ultimately lead to law and order problem also. So, I would earnestly request the Government to empower the Food Corporation to have monopoly procurement rights all over the country and then to set up its own agencies for distribution. I fully support the views expressed by my preceding speaker that unless there is a uniform machinery for procurement, you cannot have uniform price policy also.

Regarding price policy, the Foodgrains Prices Commission have stated against the fixing of the maximum price policy, but the Government has fixed a maximum price policy. Perhaps, that was also necessary. But the tragedy is that the Government has not been able to enforce the maximum price policy even in Centrally administered areas. Practically every State has been conniving at the breach of the maximum price policy settled by the Government. If in a crisis like this the Government cannot implement its own policy, it will lead to disastrous results.

The estimate is that this year's kharif crop will be about 8 million or 7 million tonnes less than last year's and the last year's kharif crop was about 3 million or 4 million tonnes less than the previous year's; so we do not know what the ultimate position of food shortage will be as regards the kharif crop is concerned. For the rabi crop also the prospect is very gloomy. The Review of the Food Situation or yesterday's Food Minister's speech did not indicate the total amount of expected or apprehended food shortage in the country.

The Deputy Minister in the Ministry of Food and Agriculture (Shri Shahnawaz Khan): 7 million to 8 million tonnes.

Shri A. C. Guba: 6 million to 7 million tonnes will be the shortage in kharif crop. He does not say what will be the total overall shortfall from our requirements.

Shri Shahnawaz Khan: How can we predict rabi now?

Shri A. C. Guba: They must have some assessment.

Reports from practically every State indicate near-famine conditions prevailing there. I would refer in a few words to my own State, West Bengal, which is a chronically deficit State and naturally to face a more serious situation in a year of abnormal scarcity.

Shri Hari Vishnu Kamath (Hosbetsada): Chairman's State also.

Shri A. C. Guba: Yes. Anyhow, due to the bold policy taken by the Government for West Bengal in January, 1965 of introducing statutory rationing in Calcutta, I think, the position in Bengal has not deteriorated so much as it might have deteriorated otherwise. But the scheme depends on Centre's support and aids. But when the policy of statutory rationing was accepted some months ago, not only at the Central Government level but also at the level of the State Food Ministers, why so long most of the States have not introduced statutory rationing even in towns up to one lakh of population? If the Government accepts a policy, particularly when the food situation is growing critical year after year, it should be the concern of Government to see that that policy is implemented.

Before coming to the present crisis, I should say something about the lapse in our agricultural policies in the report. The Re-orientation of

Agricultural Production, it has been stated:—

"It is the lack of inputs and the gulf between scientific techniques and farm practices that have been responsible for retarded progress during the three Plans"

As regards these inputs, irrigation water, I can understand, is very difficult—it may not be implemented according to target in time; there are many difficulties about that;—but what about improved seeds, fertilisers, improved implements? In every item there have been failures on the part of Government in implementing the policies and in achieving the targets put.

Then, coming to the next question, the gulf between scientific technique and farm practices, there is a complete divorce between the agricultural research institutes and the extension services. I do not know what they were going to do; I think, they have reorganised the Indian Council of Agricultural Research, but, as far as I have been able to get from these notes, even now, the Agricultural Research Council will not have anything to do with extension. So, what is the procedure they will now use for putting improved techniques into practices, or improved seeds and other things, improved varieties of crops, to be carried to the field through their extension service?

Shri A. P. Sharma (Buxar): Water is more essential than these techniques.

Shri A. C. Guba: What will be the machinery for introducing these things? So long it has almost been a complete divorce between research and extension.

In this connection I would refer to another point. Agriculture seems to be the concern of so many ministries and departments. Apart from

the fact that food is itself a head-breaking subject for any minister or ministry, I do not think the Ministers can devote enough attention to agriculture divided into so many segments under different heads, different ministries and different departments and when proper co-ordination is lacking. There should be one central authority for agriculture. It may also be considered whether agriculture should be completely separated from food and formed into a separate ministry altogether. The Food Minister has all the problems of distributing the scarce food and after that I do not think he will have much time to devote for the development of agriculture.

Now for the present problem, I think, I should compliment the Food Minister for his frank and outspoken speech yesterday. He admitted the situation is very critical. For the present no other devices, no magic can produce food; therefore, he says it might be possible for us only to get under PL-480 massive assistance which would be required to meet the situation.

Now it is not the normal condition of food shortage which is more or less chronic, not only for India but for many other countries, except for some newly colonised countries, such as the United States, Canada, Chile or Australia. Among the older countries, perhaps only France is self-sufficient or surplus in food; may other countries are deficient in food and it is the most difficult subject for any government to tackle. In such a situation what is the alternative for us? We have to import food. It is no use giving any false hopes to the nation that within five or ten years India will be self-sufficient in food. This false hope has been given to this House and to the nation repeatedly for the last three Plan periods; but every assurance has been falsified as it was bound to be falsified. So, it is no use giving false hopes; we will have to continue with the import of food to give the sustaining food to our

people. For this, I think, there should not be any hesitation on our part to receive PL-480 food.

Here I would like to remind the House that Lenin in the wake of the Russian Revolution, when there was almost famine condition prevailing throughout Europe, refused to take any American wheat on the ground that "food is a weapon"; but, when in 1922 famine broke out in Russia and millions of people were starving or dying, he allowed Maxim Gorky to issue an international appeal for food to be supplied to Russia.

All the intellectuals of the world, including Rabindranath Tagore, Einstein and Romain Rolland joined in the appeal and American food was accepted by Lenin in spite of his original objection to that. Today it is not a question of India asking for food; it is a question of surplus nations fulfilling their obligations to humanity. It is their obligation to supply food to this country at such a crisis when the whole nation is faced with impending famine condition.

In the recent Conference of Food Ministers under the Food & Agriculture Organization, the Director-General of that Organisation said:

"The world has no frontiers; we cannot see one part of humanity disintegrate in starvation and death without the rest is being deeply involved."

The question is that surplus nations should come forward and fulfill their obligations to humanity. Regarding the freight charges for carrying of PL 480 food to India, I think it is a fit question for the USA now to consider whether now that clause also should not be suspended. Food should be carried to India to avoid the near-famine conditions prevailing in India taking the form of a devastating famine, and that should be an obligation for the civilised world. It is not a question of India asking for

[Shri A. C. Guha]

aid; there is no question of bargaining or coming to terms.

Mr. Chairman: The hon. member may try to conclude now.

Shri A. C. Guha: I shall finish in two minutes.

Half of the population of Maharashtra is in the grip of starvation. In every States there is almost similar condition. It is a matter of compliment for the Government that, in the last 18 years, there has been no starvation death; even this year there has not been any starvation death. (Interruptions) There may be just one or two stray cases.

One thing I want to remind the Government about. They have mentioned a number of measures to be taken in consideration of scarcity and drought. They are welcome measures no doubt, but I would like to say that they have not contemplated any precautionary steps for the outbreak of epidemics. People will now be compelled to take unusual food, unaccustomed food, not easily digestible food, and that may lead to many diseases—cholera, gastro-enteritis, dysentery and many other diseases. So Government should immediately take some measures for the prevention of epidemics and for the supply of drinking water to all the villages wherever there may be drought conditions.

With these words I now conclude. I think that the Government will be able to rope with the situation and that the Government machinery will be geared to the task of monopoly procurement of all foodgrains. There should be one price policy for the surplus as well as the deficit States; the surplus States should not consider themselves as belonging to another country; they belong to the same country and if there is scarcity, that should be shared by all.

Shri Dinesh Bhattacharya: I have listened to the speeches made by the

different members as well as the speech given by the Minister of Food and Agriculture in respect of the food situation. This food debate takes place in every session and usually at every next session when we hear the speeches either of the Government or of the other members, we find that the situation depicted is worse than that depicted in the previous years and in their previous speeches. This has happened this time also. Even the Food Minister, in his speech, has mentioned—Shri A. C. Guha also mentioned—that, last year, the kharif production was less by 3 to 4 million tonnes than that of the previous year and this year it will be 6 to 7 million tonnes less than that of the previous year. So this is the situation. May I put one question to the Government: why even after the completion of the three Five-Year Plans and why even after injecting Rs. 2,634 crores through the American monopolists, by way of taking loan or aid in the form of food, the situation is such? The time is now ripe both for the Government and the people of our country to re-think about the situation that is prevailing in the agricultural sector. There must be something basically wrong with the policy of the Government. It is not that it has not been stated in this House or outside the House. The real problem lies: we are reiterating every time that, so long as the radical land reforms are not carried out to the interest of the real tillers of the land, there cannot be any change in the food situation. The situation that is now prevailing is as a consequence of the policy so far pursued by the Government.

Just now, our veteran Congress leader, Shri Guha, said that, in the last 18 years there was no case of starvation death. I say that this is not a fact. It may be that, within the periphery of this parliament or in the Writers' Building—in the West Bengal Assembly—or in Rotunda when you have meetings and hear speeches from the bureaucrats and Ministers, one may say that there is

no case of starvation death. But I say that hundreds of cases of starvation deaths have taken place. Of course, the Government will say that there are not cases of starvation but are something else. Only the other day when, in the West Bengal Assembly, one member drew the attention of the Government to the fact that, near Calcutta, in Hattā, a family of five committed suicide, the Government came forward with the explanation that they did not commit suicide. But I know that it was a case of starvation; for a long time that gentleman could not procure two meals a day for his family and so ultimately all of them committed suicide. In the columns of the West Bengal newspapers this has come and still the Government will say that there has been no case of starvation death. The other day the Food Minister—there was a mention about starvation death in Mysore—said that he got a telegraphic message that it was not a case of starvation. In the British days they used to say that they were cases of malnutrition or some disease. But if you really examine the cases, you will see that starvation has started in all parts of the country. I know from my personal experience that, in West Bengal, the people in the rural areas are taking meals not 14 times in the week; they do not take even one full meal daily.

An hon. Member: Everybody knows that there is shortage of food. Please say something as to how we can solve it.

Shri Dinesh Bhattacharya: I have stated that, so long as you do not give real consideration to the problem of land systems and do not carry out the radical land reforms in the interest of the peasantry, there cannot be any improvement in the situation. In certain States land reforms have been done in a haphazard way and no benefit has gone to the real farmers. What to talk of water and manure; the primary thing is land. You go round the country and you will see that the majority of the peasantry are sharecroppers and land labourers. They do

not have the real right to the land. When that is the position, how can we expect that a farmer will exert his whole energy for increased food production, knowingly well that whatever he will produce will be taken away or usurped by the landlord to the extent of half and sometimes even three-fourths. So, unless and until the present position is radically changed we cannot expect anything.

I know that every time Government will come forward and put the blame on some aspect or the other of the situation. This time Government have been saying that there has been drought and that the rain-fall has not been sufficient and so there is a danger. But may I ask what the situation in Bengal is? The Chief Minister of West Bengal himself has stated that there had been record rice production during the last year. If that be so, why is there scarcity? Why is there rise in prices? And why is there starvation? What is the wrong there? These questions must be answered. We have been told that something has been done in West Bengal as if to give the impression that everything is all right there. But I would submit that everything is not all right there. Now, Government have come forward with some short-term measures. In West Bengal, the State Government have declared that they will make monopoly purchase and monopoly procurement. But I know the fun and the people know the fun. Let us take the question of prices, for instance. Government have stated here on the floor of the House many times that the peasantry must be given remunerative prices. But only Rs. 14 to 16 has been fixed as the price of one maund of rice that would be procured from the peasantry. But the Chief Minister of West Bengal himself has said that in some cases an amount up to Rs. 21 is spent on producing one maund of paddy. And yet Government are offering them only Rs. 14 to 16 per maund of rice. In view of this, how can we expect that the

[Shri Dinan Bhattacharya]

peasantry that has got surplus would come forward and volunteer that surplus to Government? This matter must be looked into. The West Bengal Government say that the prices have been fixed in accordance with the advice given by the Agricultural Prices Commission. May I ask how that price was calculated and on what basis that price was fixed? This question must be answered, if we want to achieve any bit of success in the procurement policy of Government.

No doubt, rationing is there in West Bengal. The Food Minister here has said that the amount of ration would be 12 ounces uniformly all over India and it may be brought down to eight ounces if there is more scarcity. But I would point out that in some parts of the urban area where rationing is already in force, only 9 ounces are given. I do not know how Government would explain this position. They have to explain why in spite of the record production of last year, and in spite of the aid committed to the West Bengal Government by the Centre to enforce the rationing system, the amount of ration that is given has been cut down twice and the prices have been increased thrice to the extent of 88 paise.

As for the quality of the rice supplied, I may tell you that the rice supplied sometimes is not fit for human consumption and is not edible at all. The old stocks are brought from somewhere. I do not know where those stocks were lying. Anybody who stays in Bengal and particularly in Calcutta will corroborate my statement that the rice that is sometimes supplied is not edible at all, and he will wonder where that rice stock had been kept for so long.

Then, we are asking our working people to work hard. We are asking the labourers to work hard. There is no differentiation between the labourers and the non-labourers in regard to the quantum of ration.

Even in the British days, they had the system of giving more ration to the manual labourers as compared to the non-manual labourers. But this time the Congress Government has equalised everybody. A person may be a clerk or a doctor or he may be engaged in a hazardous job; yet the quantity of ration that he would get would be the same.

A promise was made by the Central Government that every factory which employed more than three hundred workers would have a consumers' co-operative society from where the workers could get all the food articles as well as other essential commodities. But up till now, nothing has been done in my part of West Bengal and I know of many places where also a similar situation prevails.

Our Prime Minister has given a call for self-reliance. That is good. But the subsequent events have shown that this call is not serious, and moreover it is only a camouflage tactics to hide the dangerous consequences of the policy that Government have pursued for so long and are still pursuing.

From the proceedings of the FAO conference in Rome, which was attended by our Food Minister, it is abundantly clear that Government are not at all thinking of discontinuing the import of foodgrains under PL-480 from the US imperialists. What Shri C. Subramaniam had said in his speech at the FAO conference is a clear indication that all the statements regarding self-sufficiency and freedom from PL-480 were made only to hoodwink the Indian people. There, he even appealed to the US imperialists not only to continue but to extend the period of help under PL-480, knowing fully well that the US imperialists will blackmail us at any time when we are put in difficulty. From all these happenings it is quite clear that Government are refusing to abandon the path of bankruptcy.

which they have followed for so long. They are increasingly relying on PL 480 loans and aids. They are still trying to find out a solution within the framework of the US agricultural strategy for the world.

Unless the entire policy of Government with regard to procurement, land reform, increasing production, fixation of prices, distribution etc. is radically altered, no improvement is possible.

Government have asked for co-operation from all the political parties. But I know that so far as my party, which is the biggest party in Kerala and in some other States is concerned, it has not been consulted whenever the Food Minister has called for a meeting with the political parties. In spite of that I would submit that if Government take a serious view of the situation and adopt a policy which will benefit the peasantry and which will bring about a radical change in the land tenure system and also a change in the bureaucratic method of distribution of food, the situation will change and we may achieve self-sufficiency. In this connection, I want to make some suggestions to Government.

Government are talking of self-sufficiency and they are asking the people to miss a meal a week. But may I humbly ask Government to guarantee the other 13 meals a week to the ordinary common man before asking him to forgo the fourteenth meal in the week? If Government could ensure the other thirteen meals, I am sure the people will voluntarily forgo one meal a week, if that will really solve the food problem of our country.

14 hrs.

The way Government go about this is very funny. Government say we want to increase the production of food by cultivating the fallow land in the Rashtrapati Bhavan and Raja Bhavans. Before that, may I humbly ask: Will Government take over all

the cultivable fallow lands and distribute them to the landless labourers and poor peasants so that lands that are cultivable may be cultivated and a solution may really be found to the food problem? Without doing those things which will really solve the problem, if you are thinking in terms of cultivating in tube in terraces of palatial buildings in Calcutta, Bombay and other places, you will only be doing something which is absurd. People will laugh at it. People do not take that as a serious effort to solve the food problem.

Then about irrigation. Sometime ago the Minister of Irrigation was present in the House—and I had put a question to the Irrigation Minister: was he in a position to state how many tube-wells were sunk for irrigation during the Third Plan in West Bengal and how many had been put into commission? He could not reply. He stated that he had to call for the information from the State Government. I know from personal experience that not a single tube-well has been brought into commission. They remain unutilised either for want of power or for some other reason. This is the state of affairs.

So far as electricity consumption is concerned, I know that not even 0.3 per cent is being supplied to the real farmers and agriculturists. We talk of giving all sorts of incentives and help; we talk of giving manure and fertiliser. All this has turned out to be a fiasco everywhere. In time of need, the farmers do not get any manure. They cannot afford it because they do not have cash resources. When they go for credit, there is a vast paraphernalia of formalities to be gone through so much so that it is impossible for ordinary farmers to get credit. All these credits are being utilised by the Congress fellows in the villages for development of their ownself and for doing propaganda for their own party bosses.

Shri K. N. Tiwary (Bagaha): This is not a fact. What is all this that he is talking from China to Peru?

Shri Dinesh Bhattacharya: Come with me. I will show you hundreds of instances where this is being done.

In West Bengal, they want to procure food through cooperatives. The co-operative scheme is a bunkum and a mockery. In West Bengal, not a single co-operative is functioning. It is all in paper only. It is all in the hands of persons who are working in villages as Congress volunteers of Ministers or Congress leaders.

Some hon. Members: No, no.

Shri Dinesh Bhattacharya: My suggestion is that small and medium irrigation projects should be taken up in right earnest and real co-operation should be enlisted from the villages. Otherwise, nothing tangible is going to be achieved.

There is lacuna in the ceiling system. There are some big people called jotedars or big landlords. By some trick or other, they manage to keep for themselves large tracts of land over and above the ceiling prescribed. This must be looked into and the defects rectified. All the land in excess of the ceiling should be taken over from these people and distributed among the poor peasantry.

Reference was made here to the Food Corporation of India, that it is there only in name in the matter of procurement. Nobody cares for it. The Andhra Government the other day refused to allow the Food Corporation to procure foodgrains from certain districts. This is the situation in other states also.

While effecting procurement, just as in West Bengal, we must exempt the farmers who have got uneconomic holdings. In our place exemption is given in cases where the holding is only $1\frac{1}{2}$ acres of irrigated land or

2 acres of non-irrigated land. There 5 or 6 maunds per bigha is the average production, which comes to 15 maunds per acre. A farmer who has got a family of 5 members cannot manage throughout the year with this meagre yield. He has to surrender the production if he has surplus land, above 2 acres non-irrigated land and $1\frac{1}{2}$ acres irrigated land. These things must be looked into so that he is not deprived of the yield which is not even sufficient to last him throughout the year.

Another thing is regarding the enthusiasm to be created among the peasantry. How can they surrender their surplus grains to Government knowing full well that for their very minimum necessities which they will have to purchase from the market they will have to pay more? So Government must give them a guarantee to supply them their essential commodities at moderate prices so they may not have to pay exorbitant prices for their daily necessities.

Regarding the working class population, at least for manual labourers, Government must give some extra ration. Government must do away with the distinction between the urban and rural population. The same quantum of food should be given to both the rural and urban people, and some extra quantity should be given to the working people both in the rural and urban areas. Unless you do this, you cannot expect these people to do their best to exert their whole energy for producing more either in the agricultural sector or in the industrial sector.

Summing up, I will say that so far the Government has bungled with the food of the people and the Congress Party has utilised food for politics. While they are asking other parties not to make political use of the food situation, I know in West Bengal from my personal experience that the Congress Party, just on the eve of the election, is functioning in such a manner that they may get the support of a good chunk of the

persons who are benefiting from this emergency and this serious food situation. They are managing to satisfy these people so that at the time of the election they would come forward and act as their agents.

The real cause of the trouble is this, that the Government is following an anti-people policy, a pro-boarder policy and a policy of appeasement of the American imperialists. That is the reason why our country has been brought to such a pass that everybody is now feeling that the situation is getting hopeless. I will therefore urge upon Government even now to think about this and bring a change in their policies. Otherwise, the situation will get worse and the people will not forgive them; they will not hesitate to come forward and throw out this Government and introduce a new policy so that our country may not suffer for want of food and other things.

Mr. Chairman: Shri K. C. Jena.

Shriouti Lakshminanthamma
 (Kbammam): Yesterday the Speaker said...

Mr. Chairman: There is no question of what the Speaker has said or not. The point is that he has said that all the States must be first called, and in the Congress Party itself there are two States yet to be called. Therefore, the other States must wait for the second chance.

श्री बाल्मीकी (बुर्जा) : इससे पहले कि वह बोलें, मैं आपका ध्यान धार्मिक बनना चाहता हूँ ।

समापति बहोबय : प्राय चैत तदहम् ।
 के० सी० जैना साहव, प्राय बोलना चाहते हैं
 नो बोर्ने ।

Shri Jena (Bhadrak): I am thankful to you for giving me this opportunity. I come from Orissa, which is taken as a surplus State. Actually it is not a surplus State because it has no other commodity to exchange.

and therefore we deal in food. This year due to failure of monsoon, we have also sustained a loss of about 40 to 50 per cent.

We are now confronted with one of the most testing times in the history of our nation. It is unfortunate that we are engaged in an armed conflict with Pakistan because she has thrust the same upon us. It is our national desire to develop friendship and neighbourliness with the peoples of the world, but in spite of that it is unfortunate that two of our neighbours, China and Pakistan, have become extremely hostile to us. They may attack our country again any time that suits them. Therefore, we must build up our defence and food front within the shortest possible time. The food front is as much vital as the military front, particularly so in view of the uncertainty of supplies of foodgrains from outside and the poor prospects of the kharif crop due to failure of monsoon. In view of this, our Government should devote much of their attention to the question of raising rabi crops abundantly, prompt procurement and smooth distribution of foodgrains in the country. To implement this programme effectively, the full co-operation of the State Government is badly necessary. I hope they will extend the same co-operation as soon as it is asked for.

I think it would be convenient and better if the responsibility of procurement of foodgrains is given to the States, because the State Governments have got their network of agencies in the rural areas, and they can do this procurement business in a convenient way. The farmers desirous of selling their foodgrains will have to face no difficulty to come to the procurement centres because they would not be far away from their places. If the procurement is done by the Centre, I am afraid the procurement centres might be few and far between. Due to the small number of procurement centres, the farmers will have to face difficulty because they will have to cover a long distance to the procure-

[Shri Jena]

ment centre and wait there to dispose of their foodgrains. Therefore, these difficulties of the farmers should not be lost sight of.

It is a saying from ancient times:

यावज्ज्यम् वसते तक्ष्मी,

तद्वदम् इति कर्वाणि ।

तद्वदम् रात्रि संवाया,

मिद्वयायाम् नैव नव च ॥

This was the position then. Business was the most profitable occupation. Next to business it was agriculture, next to agriculture it was service. But nowadays the position is not that. The position is like this that business has got its place in the economic field, service is the most secure one for the maintenance of one's family but agriculture is a neglected one. It is neither secure nor profitable. That is why our students coming out of the colleges and schools do not like to take to agriculture for their livelihood. Unless we make this agriculture a profitable one and a secure one, I do not think that we will be self-sufficient in food.

As far as the price of foodgrains is concerned, I should say that there should be uniform prices fixed for the foodgrains through the country. There might be some objection to this, but this should be enforced by the Government. If possible, the prices of essential commodities should be fixed along with food. Uniform prices of foodgrains will hardly allow any scope for inter-State smuggling. This business sometimes renders a surplus area into a deficit area. Some unscrupulous people sometimes sell away their foodgrains surreptitiously in an area where they are forbidden to do so by law. They do so because they get a higher price there, and they again try to purchase the same commodity from their own area if the price is low there. To encourage honesty and to discourage this black-marketing and smuggling, we should

have uniform prices for foodgrains throughout the country.

It is our experience in the past that the States have contributed their surplus food to the common pool. Now they should be asked to contribute more foodgrains, due to the emergency, for the deficit areas, even though this involves a certain amount of sacrifice on the part of the local consumers. I hope we would be able to tide over this difficult period by sharing our good fortune and hardship alike without depending on outside countries for foodgrains.

I am glad to mention here that our hard and persistent labour under the esteemed leadership of the late Panditji has succeeded in bringing about secularism in the country. The present emergency has tried and tested it well. All sections of the people of our country, whether rich or poor, have firmly stood as one man by the Government to face the enemy and the emergency boldly. Our present leader Shastriji has issued a call to miss a meal in a week to the nation. The nation has received it warmly. To keep this programme alive for the present is all right but we must try to overcome this by producing more food to meet our requirements.

Our kharif season is almost over, and we have gone over to the rabi season. Our State Governments and all our food production centres and organisations are to be mobilised for producing the maximum quantity of food. We should try to see that not an inch of land remains fallow if it is within reach of any source of water. All the community development blocks should be asked to have a double march with this programme. Our Government should make available seeds, manures, insecticides, water pumping sets etc. to the growers as far as possible. Damage done to vegetable and kitchen gardens by monkeys is on the increase, and it should be checked by the Government, and the grower should be helped.

I want to say a word about statutory rationing. In these days of hardship and scarcity, we should have statutory rationing particularly in big cities and highly industrialised areas. There might be some people who are reluctant to this idea, but this should be enforced by the Government. Unless the big cities and highly industrialised areas are cordoned off and consumption in them is controlled, they will drain the food from the neighbouring areas, and the areas in distress will go on increasing. It will be beyond the capacity of the government to manage. Therefore, we should have rationing at least in big cities and highly industrialised areas. I want to speak a word about the rationing system in Calcutta. Rationing has been introduced in Calcutta but the ration received by an individual is one kilo of atta and one kilo of rice for a week. This is hardly sufficient for a labourer. It should be increased at least a little.

श्री सरजू पाण्डेय (रसड़ा) : सभापति महोदया, हम लोग कई बार सदन में खाद्य समस्या पर बहस कर चुके हैं। आज हम ऐसे मौके पर खाद्य स्थिति पर विचार कर रहे हैं, जब कि हमारे देश में बहुत ही गम्भीर संकट है।

एक बार एक कांग्रेस के मेश्वर ने मुझ से कहा था कि अब तक दुनिया में सात आश्चर्य थे, किन्तु कांग्रेस सरकार दुनिया का आठवां आश्चर्य है और उन्होंने इस सिलसिले में यह भी कहा था कि जिसे कोई नहीं चाहता, वह भी चल रही है। यह बात समझ में नहीं आती है कि कांग्रेस के सदस्यों और विरोधी दलों ने सरकार की खाद्य नीति की जिन बातों की मुख्य रूप से आलोचना की है, आज भी सरकार उन बातों से पीछे नहीं हट रही है। बजाये इस के कि सरकार मेम्बरों की ओर से दिये गए ठोस सुझावों पर गौर करे, वह थोड़े नारे ले कर देश के सामने आती है, मिसाल के लिए "गमले में अनाज उगाओ", "ऊत पर अनाज उगाओ", "भूखे रहो", "बूहे मारो", "बिल्ली भगाओ", आदि।

श्री शाहनवाज़ खाँ : मैं माननीय सदस्य को बताना चाहता हूँ कि पिछली लड़ाई में जब जर्मनी ने रक्षा पर हमला किया था, तो वहाँ पर हर एक घर में गमलों में अनाज और सब्जी लगाई गई थी।

श्री वृजराज सिंह (बरेली) : क्या सरकार ने यह तय कर लिया है कि हम विदेशों की नकल करेंगे, चाहे हमारे यहाँ लाखों एकड़ जमीन पड़ी रहे? वहाँ पर तो सरकार कुछ करती नहीं है और गमलों पर जोर दे रही है।

श्रीमती लक्ष्मी कांतम्मा : जो कुछ भी अच्छा है, वह हम ले सकते हैं।

श्री सरजू पाण्डेय : उपमन्त्री जी ने रशिया की मिसाल दी है। इससे पहले भी एक कांग्रेसी सदस्य ने रूस की मिसाल दी थी कि जब रूस पर संकट पड़ा, तो उस को अमरीका से गल्ला लेना पड़ा। मेरा यह चार्ज है कि पिछले अठारह वर्षों में सरकार ने कृषि की तरक्की के लिए ठोस काम करने के बजाये केवल थोड़े नारों से काम लिया और जो काम करने से अनाज का उत्पादन सही मानों में बढ़ सकता था, वह उस ने नहीं किया। मैं यह नहीं कहता कि अगर रूस में कोई अच्छी बात है, तो वह न ली जाये। मैं यह भी नहीं कहता कि अगर हमारे देश में अनाज नहीं पैदा होता है, तो हम लोग भूखे मर जाय, लेकिन किसी देश से अनाज न लिया जाये। लेकिन मैं इतना अवश्य कहना चाहता हूँ कि अगर पिछले अठारह वर्षों में इस दिशा में पूरा प्रयत्न किया गया होता, जो कि नहीं किया गया है, तो देश में अनाज की काफ़ी पैदावार हो सकती थी और तब ऐसी गम्भीर स्थिति न पैदा होती।

हमारे मुल्क में कृषि के सम्बन्ध में सब से बड़ी ज़रूरत सिंचाई की है। जहाँ तक मुझे मालूम है, कुछ प्रान्तों में और खास तौर से पूर्वी उत्तर प्रदेश में अभी तक केवल छः फ़ीसदी सिंचाई का इन्तज़ाम किया गया है और सारे मुल्क में टोटल शायद 18 फ़ीसदी

[Sbri Sarju Pandey]

है। कापेंसी सदस्य, श्री गहमरी, इस वक्त हाउस में नहीं हैं। पिछली बार उन्होंने सबन में 700 करोड़ की रकम की घोषणा की थी। उस के बाद पेटेल कमीशन बनाया गया, लेकिन उस की एक रीकमेंडेशन को भी उस के एक मुझाब को भी सरकार ने नहीं माना। उल्टे उस ने यह किया कि कुछ प्रकसरों को बढ़ा दिया—7 इंजीनियरों की जगह 14 इंजीनियर हो गए, 1 बी० पी० घो० की जगह 2 बी० पी० घो० हो गए और 3 ग्रामसेवकों की जगह 25 ग्राम सेवक हो गए। अगर यही सरकार की खास नीति है, तो इस से क्या हो सकता है ?

सरकार ने "प्रकसर बढ़ाओ" धान्दोलन तो चला दिया, लेकिन पेटेल कमीशन ने पूर्वी उत्तरप्रदेश को सस्ते दर पर पावर देने के सम्बन्ध में जो रीकमेंडेशन की, उस को नहीं माना गया। उस ने यह भी रीकमेंड किया था कि उस क्षेत्र में सिंचाई की व्यवस्था की जाये, सड़कें और नहरें बनाई जायें। जहां तक सड़कों का सम्बन्ध है मेरी समझ में बीपी पंचवर्षीय योजना में भूचकल से एक जिले में तीन चार मील पक्की सड़क मिली है। इलेक्ट्रिसिटी का प्रालम यह है कि जब मिर्जापुर का पिपरी डैम बनाया गया, तो पूर्वी उत्तर प्रदेश के किसानों को यह प्राश्वासन दिया गया कि उन को सस्ते दाम पर इलेक्ट्रिसिटी दी जायेगी, लेकिन वह इलेक्ट्रिसिटी बिड़ला को दे दी गई और वहां के किसानों को आज तक सिंचाई और दूसरे कामों के लिए इलेक्ट्रिसिटी नहीं मिली है। ऐसी प्रवस्था में सरकार को चाहिए कि वह घोषे नारों को छोड़ कर सिंचाई की व्यवस्था करे और ठोस काम करे, लेकिन उस की तरफ सरकार का ध्यान नहीं जाता है।

जहां तक जमीन का सवाल है, जमीन खोतने वालों जनता के पास जमीन नहीं है। खास भी कटोड़ों एकड़ बंजर जमीन पकी हुई है, जिस पर गावों के पुराने जमींदारों और

गुंजों ने कब्जा कर रखा है। जमीन का जो बंटवारा किया गया है, वह सीलह धाने जलत है।

14.26 hrs.

[Sbri SONAVANE in the Chair]

उत्तर प्रदेश में जो बकबन्दी हो रही है, वह बकबन्दी नहीं, बल्कि किसानों की लूट है।

एक माननीय सदस्य : बकबन्दी है।

श्री सरजू पाण्डेय : घाप को यह जान कर भास्वर्य होगा कि जो नये बक बनाए जा रहे हैं, उन में सीधे हल नहीं चल सकते। जो बड़े, पैसे वाले और पावरफुल लोग हैं, उन के बक घन्ठी जगहों पर बनाए गए हैं और गरीब लोग वही जमीन में फंके दिये गए हैं। जो बास्तव में धन पैदा करनेवाले और परिश्रम करने वाले लोग हैं, इस बकबन्दी में उन के साथ अन्याय किया जा रहा है।

श्री रामसैवक यादव ने पम्पिंग सेंट्स के बारे में कहा कि पम्पिंग सेंट्स के लिए जितना कर्ज दिया जाता है, उसका 75 फीसदी दूसरे कामों में इस्तेमाल किया गया है और उस से पम्पिंग सेंट्स नहीं खरीदे जाते हैं। मैं वेलेंड करता हूं कि इस बारे में जांच कराई जाये। पम्पिंग सेंट्स से न्याकों के डोट खरीदे जाते हैं। जब एक मेम्बर ने कहा है कि इस पर राजनीति की जाती है, तो मंत्री महोदय को बुरा लभा। लेकिन बास्तविकता यह है कि एक एक सीमेंट के बोरे पर, एक एक पम्पिंग सेंट पर, एक एक कुंए पर पूरे उत्तर प्रदेश में राजनीति होती है जिस मेम्बर को सरकार नहीं देगी, वह उस के खिलाफ हो जायेगा। यह हार जायेगा।

मुझे मालूम है कि लोगों ने ट्रैक्टर के लिए पैसे लिये, लेकिन उन से लड़कों का तिलक बढ़ा दिया, उस की शर्तों कर दी। बास्तव में कोई ट्रैक्टर नहीं है, लेकिन कागज पर ट्रैक्टर चल रहा है। गांव समाज की सारी बंजर जमीन को ले लिया गया है और उस की

बंदखनी का कोई प्रबन्ध नहीं है। स्टेट गवर्नमेंट कहती है कि सेंट्रल गवर्नमेंट को कड़ो धीर सेंट्रल गवर्नमेंट कहती है कि स्टेट गवर्नमेंट को कड़ो। जब हम पूछते हैं कि फूड किस का प्राबल्य है, तो कहते हैं कि मेनली स्टेट गवर्नमेंट जिम्मेदार है। कोई भी जिम्मेदार हो, लेकिन यह तथ्य है कि पूरा कांग्रेस हासन इस के लिए जिम्मेदार है। सरकार चाहे कितना ही डिफेंस का नाम ले, चाहे कितना ही युद्ध-स्तर पर प्रोत्पादन का नाम ले, लेकिन केवल बोम्बे नारों से उत्पादन नहीं बढ़ेगा, जब तक कि देश के किसानों के लिए खाद और पानी का इन्तजाम न किया जाये।

अभी में पंजाब गया धीर वहां मुझे यह जान कर हैरत हुई कि एक हजार एकड़ जमीन बिड़ला को दी जा रही है फार्म खोलने के लिए, ताकि वहां पर अच्छे बीज तैयार किये जायें।

एक माननीय सचिव : वह को-प्रोपरेटिव फार्म है।

श्री सरजू पाण्डेय : मुझे सूचना मिली है कि अच्छे बीज के नाम पर जो फार्म बनाया जायेगा, वहां पर अच्छा बीज तो नहीं बनाया जायेगा; लेकिन कुछ गरीब अपनी जमीन से लाञ्छिमी तौर पर बंदखल कर दिये जायेंगे।

अन्न की महंगाई की बात कहां तक की जाये ? थोड़े दिन पहले मैं कलकत्ता गया था। वहां पर तीन रुपये किलो पर भी चावल नहीं मिलता है। पूर्वी उत्तर प्रदेश की भी वही हालत है। मेरे हाथ में "ब्लिट्च" है, जिस का हैडिंग है "भ्रकाल के साथ में एक करोड़ लोग"। इस में फोटो भी छपे हैं कि महाराष्ट्र धीर दूसरे प्रान्तों में क्या हालत हो रही है।

इस समय सरकार की जितनी भी योजनायें हैं, खुदा के लिए उन को बन्द किया जाये—उन को बिल्कुल खत्म कर दिया जाये। बीघा कि कई बार पहले भी कह चुका हूं, "बूहेमारो" भ्रान्दोलन, "मुर्गी पालो" भ्रान्दोलन,

"कम्पोस्ट बनाओ" भ्रान्दोलन—इन सब से कोई लाभ नहीं है, ये बिल्कुल फ्रिजूस हैं।

कम्पोस्ट खाद के लिए 150, 200 रुपये मिलते हैं। लेकिन कोई उस के लिए गड़डा नहीं बनाता है। लोग रुपये जब में डालते हैं। दो तीन इंच ऊपर डाल देते हैं धीर जब पानी घा गया, तो सब कुछ बह जाता है। भ्रगले साल कोई कम्पोस्ट का गड़डा नहीं मिलेगा इस लिए बोये नारों को छोड़ कर सूही मारों में धमल किया जाना चाहिये, जिस की बहुत ज्यादा जरूरत है।

कल मैंने राज्य सभा में दिया गया मिनिस्टर साहब का बयान पढ़ा। उच्च से मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा कि सोवियत ट्रैक्टरों का दाम बहुत कम है, इस लिए यहां के ट्रैक्टर के दाम के साथ उस को पूल कर के एक बीघ का दाम निश्चित कर दिया जाये। उन्होंने कहा कि यहां के ट्रैक्टर का दाम 11,000 रुपये है धीर सोवियत ट्रैक्टर का दाम 5,000 रुपये है, इस लिए उस का भाव बढ़ा कर कोई बीघ का भाव तय कर दिया जाये।

एक माननीय सचिव : 9,000 रुपये कर दिया है।

श्री सरजू पाण्डेय : उस का दाम 4,000 रुपये बढ़ा दिया गया है। अगर यही सरकार की खाद नीति है, तो यह तो एक मजाक है। इस के होते हुए देश के किसान क्या कर सकते हैं ? पहले सोवियत ट्रैक्टर 5,000 या 5500 रुपये में घाता था धीर मामूली किसान उस को खरीद सकता था।

श्री ए० ए० बटेल (पाटन) : क्या पांच हजार रुपये का ट्रैक्टर गरीब किसान के लिए है ?

श्री सरजू पाण्डेय : गरीब किसान भी उसे खरीदता है। अगर पांच हजार रुपये में ट्रैक्टर मिलता है, तो खाली गरीब किसान के पास ही खेत नहीं है।

[Shri Sarju Pandey]

घ्रापने जितनी स्कीमें बनाई हैं उनको मैं अभी पढ़ रहा था। ये जो नोट हम लोगों में सभ्युलेट किए गए हैं, —इनको मैं पढ़ रहा था। लेकिन घ्राप देखें कि फीमिन कोडकब बना था? यह घ्रापों के जमाने में दो सौ साल पहले बना था। उस में क्या है? उस के मुताबिक सूखे की समस्या को हल करने के लिए हमारी सरकार चहलकदमी करती है। एक एक घ्रादमी भूखों मर जायेगा लेकिन इस एक्ट के तहत काम करने नहीं जाएगा। इस के तहत उसको मजदूरी बहुत ही कम देने की व्यवस्था की गई है। वह भूखों मरने मरेगा तो भी इतने सस्ते रेट पर घ्रा कर घ्राप के पास काम नहीं करेगा। इच्छ से उसका पेट भी नहीं भर सकता है। यह बीज गलत है। घ्रादमी को कम से कम इतने पैसे तो मिलें कि वह घ्रापना पेट भर सके। जब वह नहीं होता है तो कौन काम करने जाएगा। इस फीमिन कोड की तरफ भी घ्रापको ध्यान देना होगा और इस में घ्रामूल चूल परिवर्तन करने होंगे।

सरकार रिपोर्ट तो दे देती है। लेकिन घ्राप देखें कि पिछले छठारह वर्ष में हमारे देश में लोगों की घ्रामदनी कितनी बढ़ी है? बहुत से मँम्बर साहिबान को ने इसको कोट किया है। लेकिन घ्राप देखें कि घ्राज भी एक करोड़ घ्रादमियों की घ्रामदनी 27 नए पैसे प्रतिदिन है। वह ऐसी भ्रवस्था में खाएगा क्या। यह कहा जाता है कि मछली खाओ। बिहार के एक मिनिस्टर साहब ने स्टेटमेंट दिया था कि घ्राज नहीं मिलता है तो मछली खाओ। इसी तरह से फ्रांस की महारानी ने एक बार एक बात कही—जब जुलूस निकला और वहां रोटी रोटी के नारे लगाते हुए लोग महारानी के महल के बाहर पहुंचे। महारानी ने पूछा कि ये सब लोग और क्यों मचा रहे हैं और जब उन को बता यागया कि इनको रोटी नहीं मिलती है तो उन्होंने कहा कि रोटी नहीं मिलती है तो इनको कह दो कि बबल रोटी खाएँ, केक खाएँ। इसी तरह से

घ्राप भी कमाल की बात करते हैं। रोटी नहीं मिलती र तो घ्राप कहते हैं कि मछली खाओ जो कि पांच रुपये किलो के हिसाब से बिकती है। घ्राप कहते हैं कि गोस्त खाओ जो कि तीन रुपये किलो के हिसाब से बिकता है। घ्रापके राज में घ्रालू तक तो मिलता नहीं है। यह दुनिया का घ्राठवां घ्राश्चर्य बन कर रह गया है घ्रापका राज्य। घ्रापको घ्राज की समस्या हल करनी होगी।

घ्राज प्रोक्वोरमेंट की बात हो रही है। घ्राप कहते हैं कि घ्राप प्रोक्वोरमेंट करेंगे। लेकिन जिन के पास गल्ला नहीं है उन से घ्राप क्या लेंगे। घ्राप ने कहा है कि दो क्विंटल घान हर किसान से लिया जाएगा सभी स्टेट्स में। मैंने खास कर बिहार में एक बात देखी है। दो क्विंटल से ज्यादा घान जिस के पास है वह तो उस को चोर बाजारी में बेच सकता है। ब्लैकमार्केट में बच सकता है लेकिन जिस बचारे के पास किसान के पास पांच एकड़ जमीन है तो उसको भी कहा जाता है कि तुम दो क्विंटल घान दो। पांच एकड़ में घ्रागर उसने मिर्ची भी बोई है तब भी उस से कहा जाता है कि हमें दो क्विंटल घान दो, चाहे कहीं से भी दो, बाजार से खरीद कर ही चाहे दो। बिहार में ऐसा हुआ है, कि पांच एकड़ जिन के पास जमीन है उन से दो भी क्विंटल घान की मांग की जा रही है। इस तरह से घ्रापकी जो स्कीमें हैं वे नहीं चल सकती हैं।

उत्तर प्रदेश के बारे में जितना कहा जाए थोड़ा है। वहां पर सरकार क्या है एक मजाक है। वहां तमाम की तमाम स्कीमें जो हैं वे इस बात को ध्यान में रख कर बांटी जाती हैं कि कौन इलाका सी०बी० गुप्त साहब की पार्टी वाला है और कौन इलाका कमलापति त्रिपाठी साहब की पार्टी वालों का है।

श्री शाहनवाज खां : यह गलत बात है। मैं इस हाउस को बतलाना चाहता हूँ कि जहाँ तक उत्तर प्रदेश में माइनर इरिगेशन का काम

है वह सारे हिन्दुस्तान में पहले नम्बर पर है। एक्स्परेस्टेशन का जो काम है, वहाँ वह सब से आगे जा रहा है। इस बास्ते उत्तर प्रदेश के बारे में इस तरह की बातें कहना बहुत मर-जिम्मेदारी की बात है।

श्री हुकूम चन्द कच्छबाय (देवास) :
समझे करने में भी उत्तर प्रदेश सब से आगे है।

श्री सरजू पाण्डेय : धर्म मंत्री महोदय ने बताया है कि उत्तर प्रदेश में कुएँ बने हैं। यह बात सही है। इस की मैं मानता हूँ कि वहाँ कुएँ बने हैं। माइनर इरिगेशन का वहाँ इंतजाम हुआ है। लेकिन माइनर इरिगेशन का फायदा किसान नहीं उठा पाता है। मैं मिसाल देता हूँ। जिन लोगों ने कुएँ बनावाये हैं वहाँ गलत बसूलियाँ हो रही हैं। हजारों मुकदमे इसके बारे में चल रहे हैं। वहाँ यह कहा जा रहा है कि यहाँ पर तुम्हारे यहाँ जितना पानी निकलना चाहिये था नहीं निकलना है, इस नम्बर के कुएँ के लिए या इस जगह के लिए तुम ने लोन लिया था, दूसरे नम्बर में क्यों बना लिया। इस वैज्ञानिक युग में इस तरह की बातों से काम नहीं चल सकता है। बिना वैज्ञानिक साधनों के काम नहीं धाप कर सकते हैं। यह धापकी मानना पड़ेगा। जहाँ तक ट्यूबवैल्व का ताल्लुक है सभी इस बात की मांग करते हैं कि हमारे वहाँ ट्यूबवैल्व लगाओ। सारे किसान यही मांग करते हैं कि हमारे लिए नहर बनवा दीजिये। उनकी इस मांग को हर एक मेम्बर को जब वह अपने निर्वाचन क्षेत्र में जाता है फेस करना पड़ता है। वे कुंधों की मांग करते हैं, यह नहीं कहते हैं कि गड़ढा खुदवा दो। इस वैज्ञानिक युग में माइनर इरिगेशन पर जो धाप खर्च करते हैं, वह दूसरों पर करें।

मुझे जहाँ तक मानूम है, मैं घाट कुंधों के बारे में, घाट ट्यूबवैल्व के बारे में धापकी बना सकता हूँ। वे वहाँ बेकार पड़े हुए हैं। धोर भी पड़े हुए होंगे लेकिन ये घाट तो मेरी जानकारी में हैं जो बेकार पड़े हुए हैं। एक

का मैं धापकी सारा हाल बता सकता हूँ धोर धाप ही धाप जा कर जाच कर सकते हैं। धाप मेरे साथ चल सकते हैं धोर मैं धापकी दिखा सकता हूँ। गेरपुर गांव के कंडासर स्थान में जहाँ के कांसेमी एम० एल० ए० है धोर जो गाजीपुर में है, एक ट्यूबवैल्व लगवाया गया। वह गुप्त जं की पाटों के घादमी है। उनके कहने से वह लगवाया गया। इस धाघार पर लगवाया गया कि वहाँ सिंचाई की जरूरत है। वह ट्यूबवैल्व कभी का वहां बन्द पड़ा है। पानी की वहाँ जरूरत ही नहीं है, इसलिए कि वहाँ सिंचाई के लायक जमीन ही नहीं है। यह मैंने धापकी एक मिसाल दी है जिसका धाप जा कर पता लगा सकते हैं, धाया नहीं है या नहीं है।

मैं कहना चाहता हूँ कि प्रोक्वोरमेंट की जो धापकी पानिसी है इसको धाप जबर्दस्ती लागू करेंगे तो किसानों का सहयोग धापकी नहीं मिल सकता है। विरोधी पार्टी वालों से मिनिस्टर साहब ने धपीस की है कि वे उनसे सहयोग करें। हम सब धप्र की समस्या को हल करने के लिए धापकी सहयोग देने का तैयार हैं। विरोधी पार्टी वाले यहाँ केवल धानोचना की खातिर धानोचना करने के लिए नहीं बैठे हुए हैं। यह हमारा ध्येय नहीं है। लेकिन धाप देखें कि सही मानों में कांसेस वाले क्या कहते हैं? वे भी वही बातें कहते हैं जोकि विरोधी दल वाले कहते हैं। सब से बड़ कर धापकी धानोचना कांसेस वाले ही करते हैं। विरोधी पार्टियों का सहयोग धापकी मिलेगा लेकिन धगर देश में धकान धोर धुखमरी रहेगी तो विरोधी पार्टियों समेत सारी की सारी जनता के सामने दो ही रास्ते बच रहेंगे। एक तो यह है कि वह धुंधों मरे या फिर धापके सिर पर चढ़ें। जब धाप खुद ही उसका मुकाबला करे। बिहार में क्या हुआ है। वहाँ विरोधी पार्टियाँ धानोसन करने के लिए नहीं गई थीं।

कुछ माननीय सदस्य: गई थी।

श्री सरजू पाण्डेय : वहां पर चार हजार भ्रादरियों को पकड़ कर आपने जेल में बन्द किया। प्राज भी वहां की जनता घास की जड़ें खा रही है। वहां विरोधी पार्टियां ने कोई आन्दोलन संगठित नहीं किया। आपको अच्छी तरह से मालूम है कि आपने चार हजार भ्रादरियों को जेल खाने में डाल दिया केवल इसलिए कि वहां के भ्रादमी ने रोटी की मांग की थी। एस० एस० पी० के लोग कम्युनिस्ट पार्टी के लोग, दूसरी पार्टियों के लोग सिर्फ यह कहने गये थे कि हमें खाना दो लेकिन वहां के मिनिस्टर ने उनसे मिलने से इन्कार कर दिया। यह क्या प्रजातंत्र है? यह एटी-ट्यूड नहीं चल सकता है। क्यों नहीं लोगों के सामने आप मुंह दिखाते हैं? क्यों आपमें हिम्मत नहीं होती है?

मैं दो तीन बातें निवेदन करना चाहता हूं। पहला निवेदन तो यह है कि बोये नारे आप बंद करे। अन्न खाने को लोगों को दें। दूसरी बात यह है कि इरिगेशन आप दीजिये। पानी आप दीजिये। आप नया एक्ट बनायें ताकि उन जमीनों पर कब्जा दिलाया जा सके जो वेस्ट लैंड पड़ी हुई हैं और जहां पर खेती हो सकती है। पुराने एक्ट में आप तरमीम करे।

सिचार्ज और बिद्युत् मंत्रालय में उपमंत्री (श्री इयामबर मिश्र) : कितनी वेस्ट लैंड पड़ी हुई है?

श्री सरजू पाण्डेय : उत्तर प्रदेश में मैं जानता हूं कि वेस्ट लैंड है जो दी जा सकती है और जहां खेती हो सकती है।

तीसरी बात यह है कि जितने भी माइनर इरिगेशन के साधन हैं जितने भी आपके सिचार्ज के साधन हैं उनको आप इस्तेमाल में लायें। नहरे बनी हुई हैं उन में पानी नहीं है इसकी तरफ आप देखें। जहां तक आपके भ्रफसरों का सम्बन्ध है, जितना कहा जाए कम है। जो एग्जिक्यूटिव इंजीनियर है और जिस को आप खुदा समझते हैं वह सारे मुक्त को

खा जाएगा। आपको भी खा जाएगा। हमें तो खा ही चुका है और भ्रव आप ही की शरीर है, आप ही का नम्बर है। वह महलों में बैठ कर भ्रादेश देना ही जानता है। किसानों की आवाज वह नहीं सुनता है। अगर उतका इलाज नहीं किया गया तो हमें वह खा ही चुका है आपको भी खा जाएगा, हमें जो रात दिन बह तंग करता है इस बास्ते हम तो अपने घरों से निकलते ही नहीं हैं, कहीं जाते ही नहीं हैं लेकिन आप सावधान हो जायें। अगर कमी बढ़ा रंज होता है तो आभटर को बरखास्त कर देना है। जहां तक विकास खंडों का सम्बन्ध है, वहां जो रासतोला रखाई जाती है, इंसामा होती है, उसको बन्द आप करें।

गन्नीपुर में एक अफीम की फॅक्ट्री थी जिस पर बहुत रुपया लगा हुआ था और जिस में दो डार्ड हजार भ्रादमी काम कर रहे थे, उसको अब नीमच ले जाने की न्यायियां हो रही हैं और वहां पर पांच लाख रुपया हमके लिए खर्च।

श्री उ० म० शिबेदी : (मंदसौर) गन्नीपुर और नीमच की यह बहुत ना-गवार बात कर रहे हैं।

श्री सरजू पाण्डेय : हमारा इलाका सब से गरीब है।

श्री उ० म० शिबेदी : हमारा इलाका भी बहुत गरीब है।

श्री सरजू पाण्डेय : आप से जाह्ये, हम मना नहीं करते हैं। जब वहां बहुत पुराने जमाने से है तो उसको क्यों ले जाया जा रहा है। सरकार सिर्फ पीलिटिकल कंसिडरेंडस के आधार पर उसको वहां से हटाना चाहती है।

मैं यह भी चाहता हूं कि जहां तक पूर्वी उत्तर प्रदेश का सम्बन्ध है पठन बायोग की सिफारिशों को आप लागू करें। वहां पर

सिचार्ड का प्रबन्ध करें, नहरें दीजिये, लोगों को खाने को दीजिये। व्हेस्ट लैंड पर ऐसे लोगों का कब्जा हिलाने जो सही मानों में बहाने कर सकते हैं। कोटा, परमिट, ठेका आदि पार्टों वानों से हटा कर उनके हाथों में दीजिये जो सही मानों में खेती करते हैं, और सही मानों में उतका इस्तेमाल खेती की उपज को बढ़ाने में कर सकते हैं।

Shri Maniyangadan (Kottayam): Mr. Chairman, the Minister has given a frank and objective assessment of the food situation in the country.

Mr. Chairman: I request the Congress Members to complete their speeches within 10 minutes so that I could call more Members.

Shri Maniyangadan: He has posed the problem before the country. According to me, this is not the time for criticism or fault-finding. There is a challenge and that challenge has to be met by the nation. There is drought on the one side and the difficulties of import on the other. What is needed is a changed outlook by all, leaders of public opinion, administration and the people as a whole. As the Minister rightly pointed out it is easy to make the present situation worse. Let not political ideologies be dragged in. Let there be no attempt to make capital out of the situation, whether it be political or monetary. Let that spirit of unity and national outlook which made us face the aggression on our frontiers prevail and enable the nation to face the challenge. Let us not forget that the enemies are watching what we are doing in the country. Whatever may be the outcome of the negotiations for import under PL 480, let us not forget that our honour is also involved in that.

Much has been said about this PL 480. I for one do not object to getting rice or wheat from America under PL 480, provided our honour is not sacrificed, and I am sure the honour of the country is safe in the

hands of our Prime Minister and the Government. There is scarcity now and the prospects are that there is going to be more of it. The first and foremost thing to face the situation is to generate a feeling among the people that the people of one region are not suffering more than the people of another region. Whatever foodgrains are available in the country should be equitably distributed among the people, and they should be made available at reasonable cost. The distinction between the surplus and deficit States should go. India is deficit in food and the scarcity must be borne by the nation. If the so-called surplus States refuse to part with grains produced there, saying that they want a buffer stock of their own to meet future contingencies or create a situation by which their produce could be fetched only at a very exorbitant price, it is an anti-national act and that has to be condemned. Certain States are interested only in their own States and they ignore the national interests. I have only to say about them that little minds and great nations go ill together. What I say is that the impression of that kind should be removed. Otherwise, it will lead to the disintegration of the country. Whether true or not, the prevalence of the impression itself is bad and that has to be removed.

Kerala is a deficit State from the point of view of food. But it is not because the people there are idle or because any land is left waste or because no attempts are made to increase production there. Every inch of land is brought under cultivation. The agricultural commodities produced there fetch valuable foreign exchange and the nation is benefited. Such people who serve the nation by producing commodities useful for the nation have every right to ask for food materials produced in other parts of the country. It is not asking for charity. The patronising attitude of leaders of the so-called surplus State should be given up. The Government of India have evolved a national policy for production, procurement

[Shri Maniyangadan]

and distribution. If that has not been properly implemented, I am not prepared to blame the Union Minister for that. The States are not sincerely co-operating and some remedy should be found for this. If there is a proper atmosphere, which could be created only by all concerned, we can make the scheme a success and the targets could be achieved.

The Government's policy covers both longer-range and short-term policies on the food front. Now, new targets have been fixed and schemes for achieving the same have been formulated. The only solution is, higher production. The Prime Minister has given a slogan to the nation: "Jai Jawan, Jai Kisan". If we accept that slogan, we can meet the challenge and successfully meet the situation.

In this connection, the price of food materials produced by the agriculturists is important. It is true that a Price Commission has been appointed but in fixing the price have they taken into consideration all factors that go to constitute the cost of production? The Minister yesterday said, intervening when my hon. friend Shri Sreekantam Nair, that the price of paddy in Kerala is Rs. 42 to Rs. 43 which is higher than that prevailing in Madras and Andhra States. It is true, but I have to ask, has he any idea of the cost of production in Kerala. I have direct knowledge of cultivation in one part of Kerala called the Kuttanad area, though I do not own any land there. The Minister visited that place last year in a helicopter and at that time the area was fully under water. So, he could not have any correct idea of that area. I request the Minister to believe me that the price now fixed is not commensurate with the cost of cultivation in that area. Apart from the cost and price relationship, I have also to ask the Government one thing: suppose if the same land could fetch better income by cultivating other cash crops, can you ask the pe-

sants to under go this sacrifice and ask them to cultivate only paddy there? All these aspects have to be taken into consideration in fixing the price.

Regarding procurement also, it is not done, at least in my State, as far as I know, on any scientific basis. There has been criticism from all quarters regarding this. It must be based on the yield and not on an acreage basis. In Kerala, I know—and I am sure in other parts of the country as well the same conditions prevail—there are areas where the production is one-third or even one-fourth of what is produced in other areas of the same State. But the procurement policy is based now on the acreage; one must measure so much per acre and so on. This aspect of the yield of land has not been taken into consideration. I submit that this aspect should be taken into consideration, and procurement should be on a scientific basis. I am not against procurement, but what I say is, it should be on a scientific basis.

Then, coming to credit facilities available to the cultivators the interest on loans availed of by the agriculturists from the co-operative societies is too exorbitant. The State Bank gives money to the Central Co-operative Bank in a State; they in turn give it to the district banks and then it goes to the primary bank. When it reaches the actual cultivator, I am told that the present rate of interest is more than nine per cent and what the State Bank gives is at three or 3 1/2 per cent. So, this enormous rate of interest now realised from the agriculturists should be reduced. Some way must be found for that.

Another point regarding the co-operative societies that I have to mention is, in Kerala, there is a rule—I think that such a rule prevails in some other States as well—to the effect that if there is defaults in paying back the money to the district bank, then no

further money will be made available to that primary society for giving loans. In an area which is served by one co-operative society, there may be people, one or two people, who may make default and the society may not be in a position to pay back the loan in time, but because of the default of one or two agriculturists, all the people in that area who are served by that co-operative society are suffering because they do not get any loan. This is a problem which seriously affects cultivation. I submit that something must be done in regard to that.

Then, with regard to concessions, I submit that concessions to ryots who lose by the failure of crops must be given. There must be some security against risk, for the cultivators.

Mr. Chairman: The hon. Member's time is up.

Shri Manjengadan: I shall finish in a minute. I also submit that tax concession should be given as an incentive to agriculturists.

Regarding rationing in Kerala, I must submit that it is now six ounces of rice and four ounces of wheat, but there is a suggestion in a pamphlet recently circulated that it is likely to be reduced. As I said earlier, we are prepared to bear any burden along with the rest of India. But to ask us to do more than what others are asked to do is too much. I am prepared to go to the people and ask them to be content with what is available, but please remove the feeling of being discriminated against both in the matter of price and also in the matter of quantum.

Some hon. Members rose—

Mr. Chairman: Shri Jashvant Mehta—I would request hon. Members who desire to speak to catch my eye. (Interruption).

Shri P. E. Patel: For the last two days we have been trying to catch your eye.

श्री हुकम चन्व रुद्रायः धर्यल महोदय,
पिछली बार अपना निर्णय

An hon. Member: You have to stand up on the bench.

Shri P. E. Patel: Unless you go to the Chair.

Shri C. K. Bhattacharyya (Rai-ganj): Sir, let us be encouraged to feel that catching of eye will suffice.

Mr. Chairman: This is in addition to the other factors that will be taken into consideration.

Shri Jashvant Mehta (Bhavnagar): Mr. Chairman, Sir, yesterday the hon. Minister of Agriculture gave us a picture of scarcity in some parts of the country and how we are facing the food problem. In some States there is scarcity and the people are facing difficulty even in the matter of drinking water, and there is scarcity of fodder for the cattle.

Shri P. E. Patel: Looking to that picture it seems that 25 per cent of the people must die.

Shri Jashvant Mehta: The picture is a serious one and we have to face it. Otherwise I am afraid the situation that was in Bengal will be repeated. We have to face it as we face our defence problem. Defence is the most important problem, and food is not less important than defence. We are talking of long-term and short-term policies for agricultural production. We have to face the present shortage, and also we have to face the deficit problem on a long-term basis.

Let us see how we are going to face this problem. Our main problem is of production, procurement and distribution. It demands the immediate attention of the Government. How are we going to face it?

First of all, the difficulty is, this problem is mixed up with politics—I mean politics of the States, party

[Shri Jashwant Mehta]

politics, politics of the politicians. In the beginning the emphasis was that we should not mix these problems with politics, but in reality the facts are different. Food should be free from politics. Even the States are bringing in politics in the matter of food. Surplus States are earning at the cost of deficit States. We must have a clear policy in this regard. Last year we were told that we are going to have farm-oriented policy, procurement policy. They were also discussed at the conference of the Chief Ministers. What we want is an implementation of these policies approved by Government. The difficulty is that the policy announced is not being implemented. The hon. Minister assured us that there will be farm-oriented policies, price support policies etc. He said that there will be procurement. But the States are not falling in line with the Centre. That is the politics that they are playing. Why should not the States fall in line with the Centre? I would request the hon. Prime Minister, when his stature has gone up as a result of our victory in the war against Pakistan, to compel the States to fall in line with the Centre. If the law does not permit it, if the Constitution does not permit it, we should change the Constitution. Otherwise, Sir, we will face a serious situation like what we had in Bengal and the people will die.

Shrimati Yasboda Reddy (Kurnool): The Minister stated that the States are co-operating with him. (Interruption).

Shri Jashwant Mehta: When we were faced with the Chinese aggression, when we were faced with the aggression from Pakistan, India rose as one man to fight them. Why we cannot rise as one man to tackle the food problem? Why should there be disparity in prices in different States, why should there be barriers and zones, why should there be surplus and deficit States and so on? There should be no surplus State and no

deficit State; our approach should be, one country and one uniform policy for all.

Shrimati Yasboda Reddy: We should be Stateless, without any States.

Shri Jashwant Mehta: Compel the States to fall in line with the Centre. If we cannot do this, what is the use of having these policies. What we want is a national food policy in regard to procurement and distribution. Wholesale food trade all over the country should be abolished. No transport should be allowed to be utilised for foodgrains except with the sanction of the Government. No trucks, no trains, no ships should be allowed to be used by the profiteers and blackmarketeers in the country. There should be one uniform policy, and if the Government is serious about it they should implement this policy which should be considered as the national food policy.

If the Government accepts it in principle, what is the difficulty in implementing it? There should be efficiency in administration, at the State level and at the village level. We are told that we have organised the Food Corporation. Will the Government tell us in how many States the Food Corporation is functioning and how it is functioning? For the last twelve months we have been talking about the Food Corporation and State trading in food. Why is it that this Food Corporation has not been organised in the last twelve months in each State and in each district? What is the difficulty? When we have accepted in principle that there should be the Food Corporation, every village, every taluka and every State should have it and they should deal with the distribution of food and no other person should be allowed to interfere in distribution.

About production, the hon. Minister circulated a pamphlet. It gives idea of what the Government is doing.

Even it has mentioned, what the Government has done in the last 15 years in the matter of irrigation, in the matter of better seeds, contour bunding and other things. All these things have been taken up by the Agriculture Ministry.

14.59 hrs.

[MR. DEPUTY-SPEAKER in the Chair]

But where do we stand in respect of rural credit? Let us see the figures of the Reserve Bank of India. We have not been able to supply rural credit 15 per cent requirements of the agriculturists. If we want to take rural credit to the villages, we should revolutionise the rural credit system. Agriculture is the basic industry. We should fix the credit-worthiness of the agriculturists on the basis of their land value. There should be integration in the long-term, short-term and medium-term credits scheme. If we fix credit-worthiness on the basis of the price of the land owned by an agriculturist, he can get credit on the value of his land by a simple procedure and there is no room for any corruption and delay. If we revolutionise the rural credit system in this way, we will be able to take this credit to the farmers.

15 hrs.

Then comes fertiliser. We are facing foreign exchange difficulty. The Finance Minister and the Minister of Agriculture do not come to an agreement on the matter of import of fertiliser. We should import fertiliser at any cost and supply it. The major projects are delayed because of politics. Why is it that the Centre is not taking any steps to ensure that there is no delay? Take, for instance, the Narmada Valley Project. Though it has been in the office files for the last fifteen years, no final decision has been taken in the matter for its implementation. If the Narmada Valley

Project scheme is implemented, Madhya Pradesh, Rajasthan, Maharashtra and Gujarat will be benefited. Yet, it has not been implemented. Similarly, an hon. lady Member was yesterday referring to another project in Andhra which has been also delayed. If the States are not taking up those projects because of political differences, the Centre should take up the responsibility of financing and implementing such projects. If such a step is taken I have no doubt that we will be able to tide over the shortage of food. Since we have adopted a farmer-oriented policy in order to become self-sufficient in the matter of foodgrains, I do not know what is standing in the way of Government implementing that policy which it has adopted in principle.

Lastly, I want to say something about co-ordination. There is no co-ordination between the Ministries and there is no co-ordination between the Centre and the States. What are we doing in this matter? If we cannot co-ordinate our own policy, then we will not be able to deliver the goods. Once a principle is accepted, once a policy is accepted, then there should be no delay in its implementation. If there is delay, we will not be able to achieve our objective. I have made three or four suggestions about the directions in which Government should work to solve this problem.

The Food Ministry have circulated a paper on the problem of scarcity in which they have suggested certain measures which they are taking to solve this problem. I want to stress only one thing. Government should declare a moratorium on the cooperative credit which the agriculturists have taken in the scarcity areas, at least for one year, so that there will not be any pressure on the agriculturists to pay their dues. Unless that is done, I do not think the agriculturists will be able to do their best to increase production even if we give them other facilities.

डा० राम मनोहर लोहिया (फर्रुखा-बाद) : उपाध्यक्ष महोदय, अड़तालीस करोड़ लोगों को भोजन मिले और भोजन न मिले और अकाल होता है तो इसकी जिम्मेदारी किस की है ?

एक माननीय सदस्य : वह आप के सामने बैठे हैं ।

डा० राम मनोहर लोहिया : नहीं, अगर वह अपनी जिम्मेदारी मान लें तो मामला आगे बढ़े । उनके मुंहकमे से नवम्बर 1965 को जो हम को परचा भेजा गया है उसके अनुसार अकाल या दुर्भिक्ष संहिता में राज्यों की यह प्राथमिक जिम्मेदारी होती है कि अकाल की अवस्था में लोगों को खिलाएं पिलाएं । यह परचा हम लोगों को भेजा गया था । यह उस दुर्भिक्ष संहिता के अनुसार है जो कि अंग्रेजों ने बनायी थी, क्योंकि उस के अनुसार प्रदेशों की यह जिम्मेदारी होती थी । किन्तु हमारे संविधान की धारा 47 के अनुसार यह केन्द्रीय सरकार का प्राथमिक कर्तव्य हो जाता है । केवल फर्क इतना है कि अकाल संहिता जो अंग्रेजों ने बनायी थी उसमें "जिम्मेदारी" शब्द का इस्तेमाल किया गया है, और संविधान की धारा 47 में "कर्तव्य" शब्द का इस्तेमाल है वरना प्राथमिक कर्तव्य बिल्कुल इस सरकार का है, और ऐसा परचा भेज कर यह अपने कर्तव्य से भागना चाहते हैं । इसलिए पहली बात मुझे यह कहनी है कि अगर अकाल होता है, दुर्भिक्ष होता है, मौतें होती हैं, लोग नहीं खा पाते, तो यह केन्द्रीय सरकार की प्राथमिक जिम्मेदारी हो जाती है ।

उसी के साथ साथ मंत्री साहब ने सहयोग की अपील की । मैं भी चाहता हूँ कि इस मामले में सब का सहयोग हो । लेकिन कैसे ? सब से पहले तो चीन पाकिस्तान की बात इस सहयोग से बिल्कुल निकाल देनी चाहिए, क्योंकि आप यह निश्चित समझ के रखें कि जब तक युद्ध चलता रहेगा उस समय अगर

दुर्भिक्ष से लोग मरते हैं तो मेरे जैसे लोग गुस्सा करते हुए भी चप रहेंगे और समझेंगे कि जैसे कुछ लोग दुश्मन की गोली से मरे वैसे ही ये लोग दुर्भिक्ष से मर गए हैं । लेकिन जिस वक्त चीन या पाकिस्तान से युद्ध नहीं चलता रहेगा और अकाल होगा तो उस वक्त कोई और कार्रवाई करनी होगी, अगर सरकार ने अपनी नीतियां ठीक न कीं । वह कार्रवाई क्या होगी आप जानते ही हैं, अगर आप ने जो दुर्भिक्ष को हटाने के रास्ते हैं उनको न अपनाया तो ।

सब से पहली बात तो यह है कि सरकारी पार्टी को बहुत ज्यादा सावधान रहना चाहिए अपने वचनों के ऊपर । 1962 में चुनाव किस बात से लड़कर आप जीते ? सब से बड़ी बात थी सहयोगी खेती । सहयोगी खेती कांग्रेस पार्टी का मंत्र था और कुछ विरुद्ध पार्टियों का सहयोगी खेती के खिलाफ मंत्र था । अब चार बरस का समय बीत चुका है । जिस आधार पर 1962 का चुनाव जीते उसका परिणाम कितना निकला है आज वह सोचने की बात है । आज सारे देश में कितनी खेती हो रही है । कभी कहते हैं कि 31 करोड़ एकड़ में होती है कभी कहते हैं कि 33 करोड़ एकड़ में होती है । तो समझिए कि 32 करोड़ एकड़ में देश में खेती होती है । और इस में से ढाई लाख एकड़ भूमि में सहयोगी खेती होती है । इसका परिणाम यह आया कि एक हजार में से एक हिस्सा जमीन पर आप सहयोगी खेती करवा सके हो । तो मैं ने हिसाब लगाया है कि जब तक आप हजार चुनाव इस तरह की बात पर जीतोगे तब कहीं जाकर सहयोगी खेती कर पावोगे । तो जिस चीज को ले कर आप चुनाव जीते उस में इतनी जबर-दस्त कमी दिखाई है कि अगर हिन्दुस्तान की जनता खेती से चैती हुई होती तो आपको तो बिल्कुल हटा देती, क्योंकि जिस सिद्धान्त पर चुनाव जीता करते हो उसको अपने कार्यकाल में कुछ तो अमल में लाने की कोशिश करनी चाहिये । मैं यह मान सकता हूँ कि अगर अमल

में जाने में पचास प्रतिशत, चालीस प्रतिशत या साठ प्रतिशत की कमी रह जाए तो जनता माफ़ कर सकती है, लेकिन इस में तो उसका एक प्रतिशत भी घाय हासिल नहीं कर पाए, हजार में एक हासिल कर पाए हो, तो ऐसी स्थिति में कैसे जनता माफ़ करेगी ?

Shri P. R. Patel: That was a small item in our election manifesto. Why are you referring to that?

डा० राम मनोहर लोहिया : कांग्रेसी हो कर ऐसी बात कर रहे हो। मालूम होता है अपनी पार्टी का मजाक उड़ा रहे हो वहां बैठे हुए। सहयोगी खेती को लेकर ही तो आपने चुनाव लड़ा था।

दूसरी बात यह है कि इस समय रूस और अमरीका को लेकर यह सवाल बहुत ज्यादा गड़बड़ कर दिया जाता है। कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि सारी बहस पी. एल. 480 पर ही चली गयी। उस सम्बन्ध में मुझे कहना है कि मई-जून में जब श्री प्रधान मंत्री ने रूस को खुश कर दिया था कुछ बातों को कह कर के, तब मेरे पास रूसी और अमरीकी दोनों प्राते थे। रूसी बहुत खुश थे कि हिन्दुस्तान की नीति कुछ उन के अनुसार जा रही है। अमरीकी जरा दुखी और नागत्र थे कि हिन्दुस्तान की नीति उनके खिलाफ़ जा रही है। वे लोग प्राए थे जुलाई के आस पास, जून में, और मुत्र से मिले थे, तो मैंने कहा था कि इन्तिजार करो, नवम्बर-दिसम्बर आने दो। और रूसियों को मैंने कहा था कि जो इस वक्त खुशी दिखला रहे हो वह दुःख में परिणत हो जाएगी, और अमरीकियों से मैंने कहा कि, जो घबराए हुए थे, जब अनाज की कमी होगी और अनाज मांगने के दिन आएंगे तो आपकी हानत बढ़ जायेगी। तो इस लिए पहली बात मुझे यह कहनी है कि भारत सरकार को अपनी नीति कुछ मजबूत बनानी चाहिए और वक्त वक्त पर बदलते रहना और खास तौर से रूस और अमरीका के साथ, बहुत ही बुरा है।

हमारे प्रधान मंत्री साहब अब कोसीजिन साहब से मिलने और जानसन साहब से भी मिलेंगे। अगर इन दोनों साहबों को लोक-सभा के एक साधारण सदस्य की बात पहुंच सके तो मैं कहना चाहूंगा कि आप कोशिश मत करो कि भारत की विदेशी नीति आप में से किसी एक के पक्ष में और किसी दूसरे के खिलाफ़ जाए। यह बात मैं दोनों से कहता हूँ। श्री कोसीजिन भी यही कोशिश करते हैं कि भारत की विदेश नीति रूस के पक्ष में अमरीका के खिलाफ़ जाये और श्री जानसन भी यही कोशिश करते हैं कि भारत की विदेश नीति अमरीका के पक्ष में रूस के खिलाफ़ जाये। दोनों की कोशिशें खराब हैं। उन को ये छोड़ देनी चाहिए। क्योंकि अगर वे ऐसी ही कोशिश करते रहेंगे, तो उस का नतीजा यह होगा कि दुनिया की सब से गन्दी और भूखी बस्ती हिन्दुस्तान बन जायेगा, क्योंकि यहां के लोगों में अब वह दम नहीं रह गया है कि किसी नीति पर धड़ कर के चल सकें—बे हवा के झोके के साथ पलटते जायेंगे।

इसलिए मैं इन दोनों को—अमरीका और रूस के सबल और सफल राजनीतिज्ञों को—कहना चाहता हूँ कि अगर भारत के साथ और दुनिया के साथ कोई भी झलाई करना चाहते हो, तो दो-तीन काम करो। जहां तक अनाज देने का सवाल है, मैं यहां पर पी. एल. 480 या रूस की सहायता-योजना का जो कोई नाम होगा, उस के बारे में कुछ नहीं कहना चाहता हूँ। जितना बे दे सकते हैं, दें। मैं यह जरूर कहूंगा कि हिन्दुस्तान के लिए यह शोभा नहीं देता कि वह ऐसे प्रिब्लमों की तरह मांगता रहे, जो जब तक मिले, तब तक कहें "अन्न-दाता" और न मिले, तो गानी देना शुरू कर दे। यह बात धच्छी नहीं रहा करनी है। मिले, तो धच्छा न मिले, तो भी ठीक तरह से चला जाये। लेकिन एक जरूरी बात है कि ये दोनों देश फ़ैसला करें कि भारत में मिर्चाई के लिए पानी का इन्तजाम पूरी तरह से करना है। जितना भी हो सके, रूस और अमरीका

[डा० राम मनोहर लोहिया]

करें । मैं खाली रूस से नहीं, बल्कि रूस और अमरीका दोनों के लिए कह रहा हूँ ।

जैसे वहाँ से गेहूँ मंगाया जाता है, वैसे नल, चा मिट्टी काटने की मशीनें, कुएँ बनाने की मशीनें, बिजली बनाने की मशीनें अगर पर्याप्त संख्या में रूस और अमरीका वाले हम को दें, तो ये अन्नबस्ता दुनिया का भला करेंगे और भारत को दुनिया की सब से बड़ी गन्दी बस्ती बनने से रोकेंगे । अगले सात बरस के अन्दर-अन्दर भारत की खेती को सिंचाई का पानी पूरी तरह से मिल जाना चाहिए । मैं समझता हूँ कि अभी 32 करोड़ एकड़ में से 25 या 26 करोड़ एकड़ स्वर्ण-भासरे खेती है इस स्वर्ण-भासरे खेती को सिंचि खेती बनाना रूस और अमरीका का प्रथम कर्तव्य है । यह बात मैं जानसन साहब और कोसीजिन साहब को कहना चाहता हूँ, क्योंकि शास्त्री जी को कहते-कहते मैं थक गया हूँ—उन पर कोई धरर पड़ने वाला नहीं है ।

उर्वरक के बारे में मैं कहना चाहता हूँ कि उर्वरक अच्छे हैं—जितने हों, ठीक है, लेकिन पानी नम्बर एक है, जिस पर ज्यादा जोर दिया जाना चाहिए । उसके अलावा जो कुछ भी पी० एल० 480 या रूस वाला हो, वह चलता रहे ।

लेकिन ये सारी बातें हो इसलिये नहीं पाती हैं कि इस समय भारत में सरकार नहीं है ।

श्री शिव नारायण (बांसी) : और क्या है ?

डा० राम मनोहर लोहिया : सरकार नहीं है ।

एक माननीय सदस्य : सामने है ।

डा० राम मनोहर लोहिया : मैं समझता हूँ कि माननीय सदस्यों का दल, कांग्रेस पार्टी, कहीं ज्यादा जीवित है, क्योंकि मैंने सुना है

कि लड़ाई के दिनों में कांग्रेस दल की कार्य-कारिणी की प्रायः रोज बैठक हुआ करती थी और यह जो सरकार पन्द्रह भादमियों की है, इन की बैठक कहीं मुश्किल से हफ्ते में एक बार हो जाया करती थी । यह लड़ाई के दिनों की बात मैं कह रहा हूँ । आप सब जानते हैं कि क्या हालत थी ? सरकार कहाँ है ? तब भी नहीं थी, इस वक्त भी नहीं है । लड़ाई के दिनों में सरकार संचालन नहीं कर रही थी । जो भी संचालन हो रहा था, बुरा या अच्छा, वह पल्टन के हाथों में था ।

उसी तरह इस समय कहना मुश्किल है कि अन्न के मामले का संचालन सुबह्युप्यम साहब कर रहे हैं या पाटिल साहब कर रहे हैं । क्या कभी सरकार की कोई बैठक होती है, जहाँ पर इस बारे में अच्छी तरह से बहस हो पाती हो ? मैं जानता हूँ कि कई बार काबीना के सदस्य बाहर आपस में बात नहीं किया करते हैं । लेकिन काबीना के अन्दर बैठ कर कसम खानी चाहिए कि चाहे जितनी भी दुश्मनी हो, हम लोग आपस में बात करेंगे और नीतियाँ सिद्धान्त के आधार पर बनायेंगे । इस सम्बन्ध में मैं खाली रेम्बे मैकडानल्ड और स्नोडन का उदाहरण देना चाहता हूँ, जो बिल्कुल जानी दुश्मन थे, लेकिन काबीना में बैठ कर न सिर्फ एक दूसरे के साथ बात करते थे, बल्कि एक नीति के माथ चला करते थे ।

सरकार नहीं है, नीति नहीं है और जब तक सरकार और नीति नहीं रहेंगे, तब तक यह अनाज का मसला हल नहीं हो पायेगा । यही कारण है कि जब कभी यहाँ बहस होती है—यह रोग हम में, उन में, सब में घा गया है—, तो हम दों गिरोहों में बट जाते हैं । एक गिरोह है, जो अन्न निगम और दूसरी तरह की बातें करता है । अन्न निगम के लिए एक कसौटी मैं रखना चाहता हूँ ।

इस जितने यहां लोक-सभा के सदस्य हैं, केवल एक किरी बात में, चाहे इनीन में, चाहे मकान में, चाहे कारखानों में, घपने लिए धीर घपने एक पीढ़ी तक के रिश्तेदारों के लिये राष्ट्रीयकरण का सिद्धान्त घपना लें, तब जितनी बातें यहां पर धन निगम की धीर राज्य के ब्यापार की कही जाती हैं, वे कोई मतलब रखेंगी। यहां जितने लोक-सभा के सदस्य हैं, उनके धीर उनके एक पीढ़ी तक के रिश्तेदारों की सम्पत्ति है, इमीन की सम्पत्ति है, मकान की सम्पत्ति है या कारखानों की सम्पत्ति है, जब तक कोई एक श्रेणी की सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण इस लोक-सभा के सदस्यों द्वारा घपने धीर घपने एक पीढ़ी तक के रिश्तेदारों के लिए नहीं होता है, तब तक यह धन निगम वरंरह की बात करना बिशुल किबूल हो जाता है।

यहां पर राज्य-ब्यापार के बारे में चर्चा की जाती है। मैं आपको बताऊं कि एक राज्य सरकार ने फरवरी से अगस्त, 1965 तक 42 रुपये तथा 52 रुपये क्विंटल के हिसाब से चना खरीदा धीर उसे 84 से 105 रुपये क्विंटल के हिसाब से बेचा। दूने दाम पर, 42 रुपये में खरीदा धीर 84 रुपये में बेचा। इतना मुनाफ़ा! अघर घाय बाहूँ, तो इस राज्य के ऊार बिगड़ सकते हैं। यहां पर कई लोग बिगड़े धी। लेकिन जरा इस बात पर धी ध्यान दिया जाये कि यह मामला इतना गहरा है कि घपने देश में सब गरीब—मैं तो कहूंगा महा-गरीब—होते हुए धी उनमें कुछ ज्यादा गरीब हैं धीर कुछ कम गरीब हैं।

यहां पर धन मंत्री साहब ने मत्रास धीर बंगाल की तारीफ की उन की नीति के सम्बन्ध में। मैं उनसे एक धर्ष करना चाहता हूँ। एक तो वह बाँड़ा राजनीतिक; गुट का इस मामले में न लायें धीर दूसरे, जहाँ तक गरीबी का सवाल है, एक धाकड़ा मैं धमी उन को से रखा हूँ। अघर यह देखा जाये कि एक

घायमी पीछे पिछले महीनों में लोगों ने कितनी धीनी खाई, तो धान्ध, उत्तर प्रदेश धीर बिहार में—मैं समझता हूँ कि उड़ीसा भी इसमें होगा, क्योंकि उड़ीसा का धक यहां पर मेरे पास नहीं है—वह धार किलो प्रति-व्यक्ति के धीके है, बल्कि कुछ का तो तीन किलो है, जब कि गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब धीर बंगाल का धक सात किलो से बारह किलो तक है।

तो जब इस राज्यों की चर्चा हुआ करे धीर मंत्री साहब सचमुच कोई नीति बनाना चाहते हैं, तो वह याद रखें कि हिन्दुस्तान पूरे का पूरा गरीब है, लेकिन कुछ राज्य केवल धेती की धमीरी पर निर्भर करते हैं धीर थोड़ा बहुत पैसा इधर से उधर उनको मिल जाया करता है। धब धान्ध वाले धी अघर घाय कहेंगे कि तुम धा जाधो धन निगम में, तो वह कहेगा कि तुम तामिलनाडु वाले तो बहुत ज्यादा पैसा मार रहे हो कारखानों में, हम धान्ध वालों को लूटना चाहते हैं। इस तरह की धांशट पैसा हो जाया करती है। उधर तरह धी मंत्री महोदय को ध्यान देना चाहिए।

जब राज्यों की चर्चा होती है, तो यह इस बात पर धी ध्यान दें कि 42 रुपये का निकला हुआ चना जब 84 रुपये में बिकता है, तो उसमें कुछ लोगों को घूस धीर धन्धे का मीका मिल जाया करता है धीर जब तक चुनाव इस धंग के होंगे, जैसे धाज हैं, तब तक सरकारी पार्टी के सामने हमेशा यह बड़ा प्रलोभन रहेगा कि पैसा इकट्ठा करो, नहीं तो धगली दफा धात्म। तो मंत्री महोदय की नीति नहीं चल पायेगी। यह जो इतनी अबर्दस्त लूट हो रही है—42 रुपये में खरीद कर 84 रुपये में बेचना—उसका एक मुख्य कारण घूस धीर धन्दा है।

धी क० न० तिबारी : यह तो सब पार्टियों पर लागू है।

डा० राम मनोहर लोहिया : हम सरकारी नहीं हैं। जब हम सरकारी हो जायेंगे, तब हमारे लिए कहना। धरती छो नहीं है। धरती तो हम किसी को कुछ दे नहीं सकते। तो हमको कोई क्यों देना? धरती तो घापको देना, मुख्यतः साहूब को देना, धीरों को देना। हम को क्यों देना?

घाप इस बात पर फ़ैसला करवाये कि क्या भारत में प्राकृतिक—घोर घाप: हमेशा—मृत्यु भोजन के न मिलने के कारण होती है या नहीं। इसके ऊपर हमेशा बहस चलती रहती है। सरकार हमेशा यह कह कर हट जाती है कि कोई मरता नहीं है। मैं घापको याद दिलाऊँ कि जब इंग्लैंड में चाम्पस, पचास लाख घादमी मरे थे, तब अंग्रेजों ने जो कमीशन बिठाया था, उसमें भी यह बात निखी गई थी कि किसी एक डॉक्टर ने नहीं कहा कि एक घादमी भी बिना खाये मरता है, क्योंकि ऐसा कोई डॉक्टर है ही नहीं, जो ऐसा कह सकता है। जो मरता है, वह या बुझार से मरता है, या पेचिस से मरता है, या घोर किसी कारण से मरता है, लेकिन वे सब बिना खाये मरते हैं। मैं घापके विनय के साथ कहना चाहता हूँ कि हमारे यहाँ हर साल करीब चाम्पस लाख घादमी घससमय मरते हैं। चाम्पस लाख घादमी कैसे कह रहा हूँ। घाप देखें कि यूरोपीय देशों में हजार पीछे दस घादमियों की मृत्यु होती है सात मरते हैं। हमारे यहाँ हजार पीछे 19 घोर 20 घादमियों की मृत्यु होती है। चाम्पस लाख की घससमय मृत्यु होती है। वे समय के पहले मर जाते हैं। अगर घाप चाहते हैं कि यूरोपीय मृत्यु की दर हमारे देश में रहे तो घापको उनके जैसा खाना, उनके जैसा भोजन, उनकी जैसी तन्दुरुस्ती और स्वास्थ्य यहाँ के लोगों को देना होगा। अगर ऐसा होता तो यहाँ पर चाम्पस लाख घादमी जो ज्यादा मर जाते हैं हर साल वे न मरते। वे घादमी बिना खाये या कम खाए मरते हैं। यह एक विषय है जिसको मैं घापको थोड़ा सा विस्तार में बताना चाहता हूँ। घाप

समझते हैं कि यहाँ एक भी नहीं मरता है इस कारण से। घाप समझते हैं कि अगर कोई मरता है तो खाली उपवास से मरता है। उसी को घाप नीत समझते हैं। घकास मृत्यु उसी की होती है जो घादमी खाना छोड़ दे, जैसे वैन मुदि लोग खाना छोड़ देते हैं या कोई घादमी धत रख देता है और खाना छोड़ देता है और उसके कारण से उसकी मृत्यु हो जाती है। यह विस्मय घमन चीज है। भोजन के सबब से जो मृत्यु होती है वह दूसरी किस्म की है। एक तो होती है कम खाये और एक होती है बिन खाये। यहाँ तक कम खाए का सम्बन्ध है मैं समझता हूँ कि करीब-करीब छः, सात लाख घादमी हर साल कम खाए मर जाते हैं और बिन खाए मरते हैं और धाज भी मर रहे हैं, दो, चार पांच लाख। हो सकता है कि कभी-कभी इनकी तादाद बीस-पच्चीस लाख तक चली जाती हो या चली जाए या और भी ज्यादा हो जाए। इसमें ऐसा होता है कि दो दिन खाने को नहीं मिला, फिर चार, छः छटाक मिल गया, एक दिन नहीं मिला, फिर एक या दो या तीन या चार छटाक मिल गया। ऐसे घादमी चार, पांच महीनों के ऊपर मर कर रहेंगे। ऐसे घादमियों को घाप कहेंगे कि वे बिन खाए नहीं मरें तो मैं कहूँगा कि वे बिना खाए मर गए हैं। ऐसे लोगों की मृत्यु की तादाद घपने देश में बढ़नी चली जा रही है। मृत्यु को तो घाप छोड़ दें लेकिन धब लोग इस कारण से घाप हरघण्टे तक करने लग गये हैं। घपने बीबी-बच्चों को लेकर जब्दस्त तादाद में घाप-हरघण्टे उनकी बढ़ रही है, क्योंकि खाना नहीं मिल रहा है। खाने के मामले में घाप मेहरबानी करके एक बेरी घोर बात पर ध्यान दें।

इस वक्त घाप समझते हैं कि सात-साढ़े सात छटाक घीसत पड़ता है। जब तक इस घीसत को और घादमी को विभिन्न वर्गों में घमन-घमन घाप नहीं बाँटेंगे कोई कमीजा

नहीं निकल पाएगा। पंचवर्षीय योजनाओं के आधार ऐसे हैं कि कुछ लोगों का भोजन तो बढ़ेगा और कुछ का भोजन घटेगा। इसका कारण यह है कि प्रोसत तो बढ़ नहीं रही है जिस तरह से घाबादी बढ़ती रही है। उसी घाबादी में हो रही बढ़ोतरी के हिसाब से घाब अपनी जमीन को बढ़ा पाते हैं, उस से अधिक नहीं। उससे अधिक पंदावार भी नहीं बढ़ रही है। इस वास्ते प्रोसत ज्यों का त्यों रहता है। वही साढ़े सात छटाक प्रति व्यक्ति प्रोसत रहता है। नतीजा होता है कि पंचवर्षीय योजना के कारण जो उद्योगीकरण होता है, जो लोग मजदूर बनते हैं, जो लोग रिक्ता बनाते हैं, जो लोग पलटनों में भरती होते हैं उनकी लादाद जब बढ़ती है तो वे 6-7 छटाक से 8-10 छटाक चाहते हैं। फिर जो तीन दो, चार या पांच छटाक वाले होते हैं व घट कर तीन, साढ़े तीन छटाक बनाना शुरू कर देते हैं।

घाबके डिप्लिटर साहब जब दों, चार दिन पहले मुझे मिले तो उन्होंने मुझ से पूछा कि कैसे जान गये थे कि नवम्बर-दिसम्बर में अकाल होगा। तब मैंने उनसे कहा था कि नवम्बर-दिसम्बर में अकाल होगा या जून-जुलाई में होगा यह तो हर एक घादमी कह सकता है जो थोड़ा-बहुत घर्ष शास्त्र जानता है। हालांकि मैं घाबसे कहीं सुबह्छुष्यम् साहब कि अगर घाबका भाषण मैंने दिया होता तो शायद मैं भारत सुरक्षा नि नियमों पकड़ कर जेलखाने में बन्द कर दिया गया होता कि तुमने मुक्त में बड़ी चबराहट फैलाई है, चारों तरफ तुमने अकाल की बात कह कर लोगों को एक डम से घबरा दिया है। लेकिन अच्छा हुआ घाबने घाबने भाषण में यह बात बना दी। इस वक्त मैं बता रहा हूँ कि जब तक घाबका बीजूदाशाधाय बना रहेगा तब तक इस पंचवर्षीय योजनाक्रम में पांच, दस करोड़ लोग तो घाबके पाच-ठः या सात छटाक से नौ-दस छटाक पर पहुँचेंगे और 38 करोड़ लोग घट कर चार छटाक या पाच छटाक या तीन, साढ़े तीन छटाक तक पहुँचेंगे।

2986 (A1) LSD-7.

इसलिए यह मेरी पेशानगीर्ष है कि जब तक घाबकी सरकार की बीजूदा नीति बलती रहती है तब तक इस देश में दुश्मन प्रतिबंध हुआ करेंगे। खानी फर्ष यह है कि उसमें दस लाख परते हैं या एक लाख मरने हैं, या पांच लाख परते हैं।

कल से मैं जिससे भी मित्रा हूँ वह सवाल पूछ रहा हूँ कि घाब घाब घब्र मंत्री होते तो क्या करते। घाबने मित्रों से, साधारण आदिमियों से, प्रीक्सेसरो से, सभी से मैं यह सवाल पूछ रहा हूँ कि तुम घब्र मंत्री होते तो क्या करते। कुछ का जवाब होता कि हम सब नियंत्रण हटा लेंगे, जितने भी प्रान्त से प्रान्त में घब्र की साने-ले जाने के नियम हैं उन सबको खत्म कर देते, अनाज को बिल्कुल मुक्त कर देते। कुछ का जवाब होता कि हम अनाज ही करते, पूरी तरह से बमूली करते, पूरी तरह से राशनिंग बसाते। ये दो तरह के जवाब मुझे मिले। कुछ जरूर ऐसे थे जो कि दुश्मना वाले थे। इन दोनों के जवाब मैं कल से सुन रहा हूँ। इन दोनों जवाबों में घाब देग बंट गया है। इसका नतीजा होता है कि बुनियादी बात सामने नहीं आ पा रही है। इनदो समूहों की एक बुनियादी बात घाब पकड़ कर रखी, कि कोई भी तरीका सफल नहीं है, हांभवत तक कि जेल और बंद की भी उसी के साथ-साथ व्यवस्था घाब नहीं रखेंगे विल्ली न कि किसी रूप में। मैं फांसी वाले आदिमियों में से नहीं हूँ जो यह कहूँ कि फांसी पर चढ़ा दो फिर बाड़े व्यापार मुक्त करो या सरकार के हाथ में व्यापार ले लो। दो बातें निहायत जरूरी हैं। एक तो दीर्घकालीन सिंचाई जो अभी मैंने कहा कि मुमन सिंचाई पूरी 26 करोड़ एकड़ के लिए। हमारे देश के प्रधान मंत्री जी महा राज ने घाबने कुछ दिन पहले के एक भाषण में कुछ बाने फरी थीं। लेकिन वह भाषण बोर है, कंबोवर नहीं है। दूसरी बात है कि अनाज और कारखानों के दारों में अन्तुनत कायमिकिया माएघर उत दाब के

[डा० राध प्रनोहर लोहिया]

संतुलन को जो तोड़ता है उसको सजा दी जाए, फिर चाहे वह सरकारी धादमी हो, मंत्री हो या व्यापारी हो ।

एक घाबिरी बात मैं कहना चाहता हूँ । यह जो मैं कहने जा रहा हूँ बिल्कुल निश्चित बात है । धाप समझ कर रख लें । इस में छिपाने की कोई बात नहीं है और न मैं धापको कोई धमकी दे रहा हूँ । बहुत मुसीबत में हम लोग हैं । कई जगह बमूनी हो रही हैं किसानों से । जिस किसान ने धान बोया तक नहीं है उस किसान से धान की मांग की जा रही है । कई जगहों पर जबदंती हो रही है । एक तो यह जबदंती और दूसरी तरह भगर दुष्पिण और प्रकाल पड़ा, तो जैसे मीके पर चुप बैठे रहना हमारा काम नहीं होगा । जब तक सरकार अपनी नीतियाँ नहीं बदलती है तब तक यह निश्चित बात है कि भगर कोई इन सच्ची नीतियों के ऊपर चलना चाहता है तो उसका यह धम हो जाता है कि वह इस सरकार को खरम करे और लोगों को कष्टक भ्रकाल पड़ने से पहने, भूख से मरने के पहने जाओ मंत्री और प्रफसर के घर और उनसे कहो कि हमें खाने को दो, तब तुम खाओ । जब लोगों को खाने को नहीं मिलेगा तो यह बात होकर रहेगी । इसमें अजर संशय है । मेरे पास कुछ लोग धर्मी ध्राए और उन्होंने कहा कि देखो हमारी बात उठाओ । मैंने पूछा, धापका नाम क्या है, तो उन्होंने नाम नहीं बताया । डर के मारे नहीं बताया । सरकारी नौकर हैं, बहुत अबरवस्त डर है । भाष्य उसी डर की बुनियाद पर धाप लोगों को इतना धमक है । यह धमक न करो । भारत की जनता का डर भी कभी टूट सकता है, जैसे उसका धीरज टूट रहा है और उस वक्त जो मैंने कहा है धमो, डलबा होकर रहेगा ।

धी ध० सि० सहमल (अजगीर) :
खाद्य पदार्थों को लेकर धाज जो स्थिति हमारे देश में पैदा हो गई है, उस पर धाज

यहां चर्चा हो रही है । मैं मध्य प्रदेश की इस सम्बन्ध में कुछ चर्चा करना चाहूंगा । मध्य प्रदेश को सालाना विभिन्न प्रकार के धर्षों को किस मात्रा में अकृत है, उसका थोड़ा सा विवरण मैं धापके सामने रखना चाहता हूँ । इससे हाउस को पता चल जायेगा कि दरअसल में मध्य प्रदेश सरपस है या डिफिसिट है । डोमेस्टिक कंअम्पशन के लिए बीज के साथ-साथ चावल धीर गेहूं की करीब-करीब 19 लाख मेट्रिक टन की हथें अकृत पड़ती है । इसके साथ-साथ जब नामंस इधर हमारा होता है, जिस साल स्थिति अच्छी होती है, पानी को व्यवस्था ठीक होती है, पानी बराबर पड़ता है, तब हम बराबर सप्लस रहते हैं । इस में दो रथें नहीं हैं । धाज हमारे मध्य प्रदेश में हासत यह है कि वहां बीडोस जिले ऐसे हैं जहां पर प्रकाल है, और उन में से दो कर्मिगरियाँ ऐसी हैं, छर्तास-गढ़ में, रायपुर और बितासपुर, जहां से हम लाखों टन धर्ष भेजा करते थे बाहर को । लेकिन हमारे यहां के धाकड़े मंत्री महोदय के पास है उन से मालूम होता है कि बहुत सी जगहों पर तो रुपये में धार धाना धाप भी हमें नहीं मिलेगी । इसलिये इन बीजों को देखते हुए मैं धाप से कहूंगा धाप हमारे यहां के प्रोडक्शन के फिगर्स को देखें । वह फिगर्स मैं धाप के सामने रख रहा हूँ जो कि सन् 1962-63, 1963-64 और 1964-65 के हैं और लाख मीट्रिक टन्स में हैं :

	1962-63	1963-64	1964-65
चावल	23.56	33.31	34.26
गेहूं	21.53	18.74	14.28
ज्वार	15.24	13.30	17.24
मेज	4.66	6.03	5.51
बाजरा	1.35	1.26	1.40
धाम	8.34	7.85	6.81

इन सारी चीजों को देखते हुए मैं घ्राप से धन करना चाहता हूँ कि हमारी स्टेट को जरूरत कितनी है। स्टेट के लिये चाहे हम राशनिय करे चाहे फेडर प्राइस ब्रान्स खोलें, मध्य प्रदेश को करीब-करीब। लाख मीट्रिक टन इम्पोर्टेड व्हीट की जरूरत होगी और 1 लाख मीट्रिक टन चावल की जरूरत होगी।

घब मैं घ्राप को बतलाना चाहता हूँ कि हमें मिला क्या। हमें 1964 में 1 लाख 57,000 मीट्रिक टन इम्पोर्टेड व्हीट मिला। इसके अलावा 1965 में 35,000 मीट्रिक टन इम्पोर्टेड व्हीट मिला। इसी तरह 1964 में हमें चावल मिला 9,000 मीट्रिक टन और 1965 में मिला 2,000 मीट्रिक टन।

इसके बाद घ्राप देखिये कि सेंट्रल गवर्नमेंट ने जो प्रोक्योरमेंट किया है वह कितना है। उसने 1963-64 में 1.88 लाख मीट्रिक टन चावल प्रोक्योर किया। 1964-65 में उन्होंने करीब 4.2 लाख मीट्रिक टन चावल खरीदा। इन सारी चीजों को देखने के बाद घ्राप देखिये कि गवर्नमेंट घ्राफ इंडिया की तरफ से सन् 1963-64 में 1.29 लाख मीट्रिक टन चावल का प्रोक्योरमेंट लेवी के तौर पर हुआ और उसके बाद 2.49 लाख मीट्रिक टन महाराष्ट्र और गुजरात को व्यापार बतलाने की दृष्टि से भेजा गया। इस तरह से यह सब मिला कर 3.77 लाख मीट्रिक टन हो गया।

हमारे यहां 1678 फेडर प्राइस ब्रान्स हैं। यदि उनके होते हुए हम से कहा जाता है पूरे स्टेट के सम्बन्ध में कि हम सर्प्लस हैं तो मैं ज्वार के बारे में भी घ्राप को बतलाना चाहूंगा। हमारे यहां जब फसल अच्छी होती है तब हम ज्वार और चने ये चीज़ें सर्प्लस हो जाते हैं। जब हमारे यहां गेहूं कम होता है तब यही ज्वार और चना पश्चिम भाग में खर्च होता है। उस का इस्तेमाल करने के बाद जो एकट्ठा ज्वार बच जाता है

उस को हम उन जगहों में भेज देते हैं जो कि डेफिसिट होती हैं। हमारे स्टेट के हिसाब-किताब को देखने से पता चलेगा कि हम ने कुल 54,000 मीट्रिक टन खरीदा। उसमें से केन्द्र के हुकम के मुताबिक हम ने 10 हजार टन महाराष्ट्र को भेज दिया और 40 हजार टन गुजरात को भेज दिया।

इन सारी चीजों को बतलाने के बाद घब मैं कुछ भावों के सम्बन्ध में बतलाना चाहूंगा। गवर्नमेंट घ्राफ इंडिया के हुकम के मुताबिक स्टेट गवर्नमेंट ने व्हीट, पेंडी ज्वार, बाजरा और मेज केजो भाव 1964-65 के लिये मुकर्रर किये वह इस प्रकार हैं :

(1) पेंडी :	
कांस	35.00 रु० पर बिबटल
मीडियम (2)	36.75 रु० पर बिबटल
मीडियम (1)	34.15 रु० पर बिबटल
(2) व्हीट :	
रेड बेराइटी	45.50 रु० पर बिबटल
कामन बेराइटी	49.50 रु० पर बिबटल
सुपीरियर बेराइटी	53.50 रु० पर बिबटल
(3) कांस घेन :	
ज्वार	38.00 रु० पर बिबटल
बाजरा	40.00 रु० पर बिबटल
मेज	36.00 रु० पर बिबटल

इन सब बातों को देखते हुए मैं इरिगेशन मिनिस्टर साहब से कहूंगा कि वह जरा गौर करें। घ्राज हस्ता प्रोक्योर से घ्राप लोगों को पानी नहीं देते हैं। मैं कहता हूँ कि घ्राप घ्राप पानी की व्यवस्था कर दीजिये तो जो हमारी सर्प्लस डिस्ट्रिक्ट्स हैं वहां से हम बचावर भी गार्टेज वाली स्टेट्स हैं उन को पत्र दे सकते हैं। इस के लिये हम नहीं, नहीं करेंगे। लेकिन जब तक इरिगेशन फॉर्मलिटोज नहीं होती है तब तक कुछ नहीं हो सकता है। हमारे इरिगेशन मिनिस्टर साहब ने बहुत ही

[श्री श्री ० सिंह सहगल]

जगहों पर जा कर देखने के बाद इरिगेशन की व्यवस्था की। इसके लिये मैं उन को बघाई देता हूँ लेकिन बघाई देने के साथ साथ उन से यह प्रार्थना करूँगा कि प्राय हमारे हस्वी प्रोजेक्ट का पहला दर्जा क्यों नहीं लेना चाहते हैं। चाखिर हम से प्राय चाहते हैं कि हम देश को धन दें जो उस धन के लिये प्राय को पानी की व्यवस्था भी करनी चाहिये। प्राय को जो दूसरी प्रोजेक्ट है वह स्टो परपज प्रोजेक्ट है। वह सिवाई के उतने ही काम प्रा सकती है।

इसी तरह से अगर प्राय चाहते हैं कि बिलासपुर तहसील में ज्यादा पैदावार हो जो प्राय को प्राय प्रोजेक्ट को भी हाद लेना चाहिये। इसी तरह से बिलासपुर अगर हाफ प्रोजेक्ट पर भी धोर कीजिये। हमारे प्रदेश के दक्षिण में जो जो भी स्टेट्स हैं वहाँ चूँकि पानी की व्यवस्था है इसलिये वह हम से धोर तिरुगो काप्स ले रहे हैं। क्या अगर हमारे वहाँ पानी की व्यवस्था हो जाये तो हम भी उसी तरह से पच्छी काप्स प्राय को नहीं दे सकते हैं। जरूर दे सकते हैं। लेकिन इसके लिये जरूरी है कि हमारे वहाँ जो फॉरन कॉन्ग्रेस इस वस्तु बनी हुई है उन में रिजर्व वरस का खोला जाये। रिजर्व वरस के साथ वहाँ पर प्राय प्राधिकारियों को खाना दें। साथ में जो तकाको लोन्स प्राय ने दिये हैं जो बेकारे काश्तकार उन को वापस नहीं दे सकते हैं उन के ऊपर हमें सहृदयता से धोर अनुषंग के नाते ज्वार करना पड़ेगा धोर व्यवहार करना पड़ेगा। तबकि वहाँ के लोगों के साथ हम कोई किसी किसम की जोर अदरदस्ती न करे धोर हमारा कार्य हो। हमारी ख्याति आज कुछ लेने से बहुत ही भयानक है, हमारे काश्तकार प्राइयों को धोर इसलिए काश्तकार हरदम मनी लैडम के पास जाता है। मैं प्रपने कृषि मंत्री महोदय से प्रार्थना करूँगा कि प्राय इस बात को चिन्तये कि जो बड़े बड़े बैंक्स हैं उन बैंकों के जरिये से, जो फॉरानरेटिव बैंक्स हैं उनके

जरिये से प्राय इन्डिजुमल लोन्स दें। प्राय तो बात असल यह है कि सहकारिता के आधार पर हम जितने भी लोग हैं वह शामिल हों तभी पया पा सकते हैं। इसलिए इन्डिजुमल लोन पर भी प्राय को ज्वार करना है।

भाखरी शब्द में यह कहूँगा कि यह जो स्मात हॉल्डिंग्स हैं, मैं एक खुद काश्तकार हूँ धोर मैं खुद 150 एकड़ में धेती करता हूँ लेकिन प्राय मेरी यह हालत है कि मेरे पास में कोई भी ऐसी चीज नहीं है। क्योंकि मेरे वहाँ धन नहीं हुआ है तो बीज के लिए भी मेरे पास कुछ नहीं है, तो वह क्या कर सकेंगे यह तो हम लोगों की हालत है जो कि खेती करते हैं। इसलिए खाद के बारे में फटलाइजर्स कोखा में लगाना चाहते हैं जिससे कि छतीसगढ़ को ही फायदा नहीं होता सारे प्रान्त को फायदा होता, लेकिन वह भी पता नहीं कब लगेगा, इसका निर्णय प्राय लेंगे।

मैं प्राय से यह भी कहूँगा कि अनुमन्थान का जो कार्य प्राय कर रहे हैं, प्रायको जो फॉर्मिंग है, उसका देखकर के हमें देखना पड़ेगा कि किस तरह से हम प्रायें बढ सकते हैं। धन में एक शब्द कह कर शब्द करता हूँ कि प्राय के जो डिपार्टमेंट है, कम्प्यूनिटी डेवेलपमेंट है, इरिगेशन है, फूड डिपार्टमेंट है, इनको तो प्राय इस तरह से बांधिये जिसमें एक दूसरे से कन्धा मिला कर चल सकें। यदि हम धन धन रास्ते जायेंगे तो कामयाबी नहीं कर सकते। इसलिए मैं प्रायें करूँगा कि प्राय धन बीज को बारे में जस परलेकर के काम करे धोर इस में हमारी कामयाबी है।

Shri Babu Manthaya (Bangalore City): Sir, today, I am not making a speech formulating proposals to relieve the great crisis that has arisen in this country. That requires probably longer time and greater seriousness of approach. Today I feel like speaking after I heard on the

rushing the necessary amount of food-stuffa to Mysore to help people who are affected by scarcity conditions; I felt very happy and I felt like thanking the Government of India. It is therefore that I have summoned courage enough to speak today. The southern part of Mysore from which I hail never knew what scarcity conditions were in human memory. In fact when other parts of the country suffered from famine we had plenty of rain and food crops. My grandfather used to narrate that about ninety years ago there was a famine and lot of people died. Sir M. Visveswarayya has written a biography of his. He mentions this famine. It seems there a number of people died and bodies were scattered in the streets, in the villages and the towns. Similar things would have happened today. But the world conscience is such today that it has evolved to a certain level, certain height, I suppose, that no country will look on with equanimity when people in other countries die of hunger. Whatever our leaders may say, that we want aid with strings or without strings, these are irritating phrases; these are phrases that emanate from haughty hearts. This is the time when we have to feel humble. when we have to make the other nations of the world feel that here is a country which needs their sympathy, help and assistance. It is not a question of a beggar laying down conditions. Whether our leaders formulate phrases in this irritating manner or not, the world is bound to help us and it will help us. Therefore, there is no need for us to get frightened over these things. If there is no such help we are bound to lose, not 5,000 people or so—the casualties we suffered on the western front during our recent conflict with Pakistan—but 5 crores of people who will die of hunger in India. That is the position we are facing today. We have to so formulate our foreign policies that we have to give up this 18-year old repetition of those formal phrases which have brought more anger from many a nation

against us than mellifluous attitude. All the time, we repeat the same words and phrases for the last 18 years, and it is time that we changed them. If we want aid or help without strings, we must be conscious in saying so; that we are having our own strings in getting help from others. This is a kind of perverse psychology. On the other hand, if you say that we need so much help and that people are dying, then, it appears as proper frame of mind. That is necessary. That will be of much help, in order to get help from abroad.

I shall make only two or three suggestions pertaining to the scarcity areas. Relief measures should be immediately taken up. My hon. friend the Minister of Irrigation knows that nearly two years ago, the Members of Parliament from Mysore sat in a conference, and the late Shri Dasappa, although he was a Cabinet Minister, was present at the meeting. All of us unanimously requested that a particular minor irrigation project may be taken up in the Bangalore district, the project called Manchanavele project. The Minister also agreed, but it has not yet reached the stage of even administrative sanction. This is the way we are proceeding in our governmental work. The reason, I do not want to state here, because this is too serious a situation for us to accuse one another. I do not want to do it today.

This project will serve not only as a future protection against famine and scarcity conditions but it will immediately provide people with relief work. So, this work must be immediately taken up. That is my request to the hon. Minister for Irrigation and Power.

The Minister of Irrigation and Power (Dr. K. L. Rao): What is this project?

Shri Hanumanthaiya: It is in Bangalore district; Ramavaram Taluk. Your predecessor, Hafiz Muhammad Ibrahim, had sanctioned it. I read that the Central Government is

[Shri Hanumanthaiya]

Next, I make a personal appeal to the Food Minister to see how anomalous the position is regarding pulses. In Punjab and Rajasthan Bengal gram sells at about Ra. 50 per quintal. The same stuff is sold at about Rs. 200 in Mysore. I have received this letter from Shimoga. If there is free movement, if people are not able to get rice or ragi or other grains, they can at least eat these pulses.

The Minister of Food and Agriculture (Shri C. Subramaniam): There is no restraint on pulses.

Shri Hanumanthaiya: I am speaking subject to correction. The letter says, "Need for removal of movement restriction on pulses."

Shri C. Subramaniam: There is no restriction on the movement of pulses.

Shri Hanumanthaiya: If there is no restriction, I am very happy.

Shri Shekhar Singh (Gorakhpur): On gram, there is restriction.

Shri C. Subramaniam: I agree that on gram there is movement restriction but not on pulses.

Shri Hanumanthaiya: That is a distinction without much difference.

Mr. Deputy-Speaker: Is not gram a pulse?

Shri C. Subramaniam: Because gram is used as a cereal in Uttar Pradesh, Bihar and Punjab and other places, they wanted it to be classified as a cereal and be left with them and be moved on a controlled basis, but as far as other pulses are concerned, there is absolutely no restriction.

Shri Hanumanthaiya: Therefore, the truth of my statement is partially admitted by the hon. Minister. Gram is a very substantial food in our part of the country. Many a time a kilo-gram of gram would be able to maintain a family for a day or two. There

it is a substantial food, a nourishing food, and I want restriction to be removed throughout India so far as Bengal gram is concerned.

Shri K. N. Tiwary: Not only Bengal gram, Punjab gram also.

Shri Hanumanthaiya: All kinds of gram.

Another suggestion I could make is this. I have been watching this food problem being discussed, being evolved, being implemented for the last 18 years. I was a member of the Provisional Parliament also. Ever since that time the same proposals have been there. Whatever the present Minister has formulated and adumbrated in his speech here and elsewhere, the same suggestions have been made, discussed and approved before. It is only at the stage of implementation that it has failed. I am very happy, the hon. Food Minister has very frankly and very courageously pointed out the administrative deficiencies. It is, in fact, this administrative deficiency that is responsible for the present situation—it is not so much planning, it is not so much the formulation of policies. If, as they say, food has to be tackled on a war basis, do we really implement it—that very phrase, "tackling it on a war basis"? In the days when we were fighting with Pakistan every one of us was on his toes. The Cabinet formed a sub-committee. The Prime Minister was constantly in charge of day-to-day developments. If this food problem, the biggest problem which in the most tragic way is facing us to day is to be solved, the food portfolio should be taken by the Prime Minister and the food portfolios in the States must be taken by the Chief Ministers. Secondly, all the IAS and ICS people must be kept away from anything concerned with food and agriculture people who know about agriculture, namely, departmental people, engineers and technicians must be made responsible for

this work. A sweet-speaking Secretary in the Secretariat, either here or there, manages to become the Director in charge of food production. What incentive can these technical people have if a generalist comes and sits over their heads? He has neither the necessary knowledge the necessary psychology, nor the necessary vision in that particular field. The first and foremost thing that is to be done is to keep these IAS and ICS people away from the field in which they are not proficient. Then, the so-called Director of Agriculture—because he has that background of agriculture—must be made really responsible for agricultural production. If he is not able to deliver the goods within a particular period he must be dismissed. The psychology of "war basis" is that you go and lay down your life in the war front. It is only when you are prepared to lay down your life that you will be able to win a battle. You cannot keep your body intact and yet kill the enemy and win the war.

Shri C. Sabramaniam: At least we should lay down our office!

Shri Hanumanthaiya: At least these people who are Directors of Agriculture and their subordinates and, even if it comes to that, the concerned ministers, must be told that they should lay down their offices, if they are not able to fulfil their pledge within three years or so.

श्री लम सिंह (बाइमेर) : माननीय उपाध्यक्ष महोदय, मूल प्रस्ताव रखते हुए माननीय कृषि मंत्री महोदय ने बताया था कि हमारे यहां अभावधर और अकाल का मुख्य कारण वर्षा का अभाव है। लेकिन मैं निवेदन करना कि वर्षा कोई एक ऐसा नया कारण तो नहीं है। देश की जनबाध किसी १२वीं विधेय के कारण परिवर्तित हो गयी ऐसी भी बात नहीं है। जैसे हमारे देश को जलबाध पहले भी बँसी ही प्राय है और अविष्य में भी घेनी ही रहेगी, और यदि अन्न संकट के सम्बन्ध में हम वर्षा के अभाव के कारण को

लेंगे तो उसका तो कोई अन्न ही नहीं होगा, विशेषतः हमारे अभावही प्राप्त करने के 18 साल बाद जब कि हम अपनी आर्थिक योजनाएँ बना रहे हैं। 15 वर्ष से हमारा आर्थिक नियोजन चल रहा है, फिर भी अन्न वर्षा पर हम अभावग्रस्त रहेंगे और तकनीकी ज्ञान और वैज्ञानिक प्रयोगों के बाद भी हम वर्षा और बाढ़ का कोई निर्वन्धन न कर सकेंगे, तो हमारी योजना का कोई अर्थ नहीं है।

मैं तो यह कहूँगा कि 15 वर्षों से लगातार करीब करीब प्रति वर्ष सोक अन्न में अन्न संकट पर और बाढ़ पर बहस ही हो जाया करती है। जब कभी भी ऐसी परिस्थितियाँ पैदा होती हैं उस समय हम कुछ अभावही कार्य अपने हाथ में लेते हैं और थोड़ी सी राहत मिलने के बाद बेखबर हो जाते हैं। नतीजा यह होता है कि इस समस्या का कोई स्थायी हल नहीं मिल पाता और प्रति वर्ष यह समस्या बढ़ती जा रही है।

हमारे देश में एक योजना आयोग का गठन हुआ, और उस के सम्बन्ध में बताया जाता है कि सारे देश का संतुलित विकास इस आयोग द्वारा हो रहा है। मुझे खेद है कि यह आयोग न तो इस देश की जनता के प्रति उत्तरदायी है, न इस अन्न अभाव के प्रति उत्तरदायी है। प्रायः 15 वर्षों के बाद भी यदि वह बाढ़ निर्वन्धन न कर सका, अन्न दृष्टि के मामले में अन्न प्रकार में अनुविद्यो-जित न कर सका तो मैं नहीं जानता कि यह योजना आयोग क्या कर रहा है। केवल औद्योगिक उत्पादन के दृष्टिकोण में योजना आयोग ने यदि हमारा करोड़ रुपया खर्च कर दिया है और कृषि को निपट उपेक्षा की है, तो औद्योगिक उत्पादन पर भी उसका कुछ अन्न पड़े बिना नहीं रहेगा।

अभी अभी एक पूर्व बहस ने बताया था कि अन्न के मामले में राजनीति का

[श्री तन सिंह]

प्रयोग नहीं होना चाहिए। मैं निवेदन करूंगा कि संसार में बहुत से ऐसे देश हैं जैसे इजराइल, जहां की जनवायु और परिस्थितियां राजस्थान के समान हैं। लेकिन उस देश ने बहुत थोड़े समय में अपने तकनीकी ज्ञान और वैज्ञानिक प्रयोगों से बहुत उन्नति की है। हम ने भ्रख राष्ट्रों को संतुष्ट करने के लिए ही इजराइल से दौत्य सम्बन्ध स्थापित नहीं किए हैं, किन्तु हमारे देश की बहुवृद्धि के लिए उन के इस प्रकार के तकनीकी सहयोग में क्या बाधा पड़ती है? और यदि यह राजनीति नहीं है तो मैं नहीं जानता कि इस प्रकार के देशों से हम लाभ क्यों नहीं उठा पाते।

और राजनीति का एक और उदाहरण दूंगा। सिंदरी में खाद का कारखाना बनाया गया है और उस के लिए जिप्सम आता है राजस्थान से। जो जिप्सम खान पर पांच रुपया और सात रुपया पर टन पड़ता है वह सिंदरी पहुंच कर 39 और 43 रुपया प्रति टन पड़ता है रेल भाड़े के कारण। सिंदरी कारखाने में वही खाद बन जाने के बाद वापस राजस्थान में लाया जाता है तो उस का मूल्य तीस और 35 रुपया प्रति टन और बढ़ जाता है। यदि यह राजनीति नहीं है तो यह योजना आयोग की कौन सी सूझ बूझ है कि कच्चा माल तो राजस्थान में ही रहा है और कारखाना बनाया जा रहा है बिहार में, कच्चे माल को वहां पहुंचाने और वापस तैयार माल को लाने में 60 रुपया प्रति टन उस पर उत्पादन का बोझ पड़ जाता है। मैं तो यही कहूंगा कि योजना आयोग की सूझ बूझ के कारण ऐसा हो रहा है, तो निश्चय ही उस की सूझ बूझ के पुर्जे ढोले हैं।

यदि अनावृष्टि का हम स्थायी रूप से मुकाबला करना चाहते हैं तो हम को नहरों का जाल बिछाना पड़ेगा। अभी खंड है कि हमारी समूची भूमि में केवल 20 प्रति स्रत

भूमि ऐसी है जहां सिंचाई होती है। राजस्थान नहर योजना के लिए बड़ा शोर मचा है। उस का स्वर कांडला तक पहुंच गया है लेकिन उस में पानी सूरतगढ़ तक भी नहीं आया है।

16.00 hrs.

राजस्थान सरकार ने बहुत पूर्व भारत सरकार से निवेदन कर दिया था कि राजस्थान नहर का जो आर्थिक दबाव है वह उसे सहन नहीं कर सकती। उस के पास इतने आर्थिक साधन नहीं हैं, इसलिये भारत सरकार को इस कार्य को अपने हाथ में ले लेना चाहिये। न जाने भारत सरकार के किन विभागों में राजस्थान नहर योजना के लिये इतनी सुस्तो भाई जिस के कारण इतने वर्ष इस का निर्णय करने में लग गये, और आज भी मुझे सन्देह होता है कि भारत सरकार के इस निर्णय के उपरान्त राजस्थान नहर परियोजना शीघ्रता से पूर्ण हो जायेगी। इस नहर का महत्व इतना ही नहीं है कि वहां अन्नोत्पादन की न्यूनतायें हट जायेंगी बल्कि इस का प्रतिरक्षा की दृष्टि से भी बड़ा महत्व है। आप जानते हैं कि अभी भारत और पाकिस्तान के संघर्ष के बीच, हम यह यदि मान भी लें कि हम लाहौर पर आक्रमण करना नहीं चाहते थे तथापि यह बात छिपी नहीं है कि उस के बीच में इच्छोगिल नहर ऐसी थी जिस को पार करना हमारे सैनिकों के लिए आसान काम नहीं था। यदि हम इस बारे में विचार करें तो राजस्थान और पाकिस्तान के बीच में लगभग 600 मील लम्बी एक ऐसी सीमा है जो प्राकृतिक सीमा रेखा नहीं है, और इस देश के बचाव के दृष्टिकोण से यदि इस नहर का युद्ध स्तर पर निर्माण किया जाये और जो कि रामगढ़ तक आने वाली है उस को कुछ और लम्बा किया जाये, सौ या सवा सौ मील और लम्बा किया जाये, और नहर बनाया जाये, तो यह नहर केवल हमारे अन्नोत्पादन में ही योगदान नहीं दे सकती बल्कि हमारे देश

के लिये यह एक प्राकृतिक सीमा रेखा का भी काम कर सकती है और वहाँ के सारे साधनों का भी हम ठीक प्रकार से उपयोग कर सकते हैं ।

मेरा विश्वास है कि प्रतिरक्षा विभाग और कृषि विभाग के बीच समन्वय की बड़ी आवश्यकता है । शंकर समिति ने बहुत पहले यह दृढ़तापूर्वक सिफारिश की थी कि कृषि, सामुदायिक विकास और सिंचाई विभागों के लिए एक यूनिफाइड कमान्ड होनी चाहिये । जिस प्रकार रक्षा मंत्रालय में वायु सेना, जल सेना और स्थल सेना के प्रतिरिक्त उत्पादन और सम्भरण विभाग है, फिर भी वह स्वयं अपने अन्दर एक सेल्फ कंट्रोल रक्षा मंत्रालय है, उसी प्रकार यदि हम स्थायी तौर पर अपने अन्न संकट को हल करना चाहते हैं तो इन विभागों के बीच में एक यूनिफाइड कमान्ड होनी चाहिए और उन में समन्वय और सन्तुलन होना चाहिये ।

राजस्थान में जब पिछले वर्ष अकाल पड़ा था उस समय कृषि मंत्री महोदय ने सबन को आश्वासन दिया था कि उसी वर्ष ढाई सौ नलकूप वहाँ छोड़े जायेंगे, लेकिन मुझे खेद के साथ निवेदन करना पड़ रहा है कि उन ढाई सौ नलकूपों में से केवल 125 तक ही बन सके हैं । प्राप अनुमान चाहे जो बना लें और उस के वास्ते चाहे जितने व्यापक धाँकड़े प्रादि दिखा दें, लेकिन मेरी समझ में नहीं आता कि हम इन आश्वासनों, आशाओं और विश्वासों के आधार पर कितने घसँ तक लोगों को गुमराह कर सकते हैं । यदि यह कहा जाता है कि राजस्थान सरकार ने नलकूप योजनाओं के लिये स्थान निश्चित नहीं किये थे तो इस की जिम्मेदारी किस पर है, यह मैं समझ नहीं पा रहा हूँ ।

अभी बहुत सी बातें इस विषय में भी कही गई कि केन्द्रीय सरकार के पास कृषि विभाग होते हुए भी कृषि मूलतः राज्य सरकार का विषय है, और इस में राज्य सरकार में

और केन्द्रीय सरकार के बीच में पूरा समन्वय नहीं है । केन्द्रीय सरकार की नीतियों को राज्य सरकारें ठीक प्रकार से निभा नहीं पाती, उस की नीतियों को वह ठीक प्रकार से धार्ये नहीं ला पाती जिस के कारण इस समस्या के अच्छी तरह से हल होने में अशुविधा रहती है । लेकिन यह जिम्मेदारी किस पर है । यह वक्तव्य उन्हें बजाय लोक सभा में देने के अपनी कांग्रेस पार्टी में देना चाहिये क्योंकि राज्य सरकारें अभी उसी पार्टी की हैं । यदि यह नहीं हो सकता है तो चाहे कुछ भी करना पड़े, चाहे संविधान में संशोधन ही करना हो या और किसी प्रकार की प्रक्रिया स्वीकार करनी हो, वह हमें करना चाहिये । हम यह नहीं चाहते कि हमारे देश में अन्न का संकट इसी प्रकार बना रहे और उस के मार्ग में राज्य सरकारें राजनीति के बश या अपनी स्वाभाविक आगमत्वकी की वजह से रोड़ा बन कर खड़ी रहें ।

मैं प्राप को एक ऐसा दृष्टान्त देना चाहता हूँ । हमारी केन्द्रीय सरकार ने राजस्थान के जेसलमेर क्षेत्र में नलकूप बनाये थे सन् 1954 में । उन नलकूपों में लगभग 50 हजार गैलन पानी प्रति घंटा प्रा सकता था । लेकिन प्राप को यह जान कर आश्चर्य होगा कि सन् 1964 तक उन नलकूपों के अन्तर्गत पड़ने वाली जमीन का प्राबंटन अथवा फ्लोटमेंट नहीं हुआ । यदि हम लाखों रुपये एक नलकूप पर खर्च कर सकते हैं और व्यापक रूप में हमारी सरकार नलकूप खूदवा सकती है और नौ वर्ष तक राजस्थान में नलकूपों का प्राबंटन रुका रहता है तो भारत सरकार को अवश्य ध्यान देना चाहिये कि गड़बड़ी कहाँ है । या तो कानून में गड़बड़ी है या व्यवस्था में गड़बड़ी है । प्रशासनिक व्यवस्था जो है उस की प्रावधान न करना ही ठीक है । मैं अब भी निवेदन करूँगा कि सन् 1954 में नलकूप खुदे जिन का प्राबंटन नहीं हुआ है । परन्तु अब भी नलकूप छोड़े जा रहे हैं जहाँ जमीन का बटवारा नहीं हो रहा है और इस

[श्री तन सिंह]

लिये जो सिवार्ड के साधन उपलब्ध किये जा रहे हैं उन का पूरी तरह से उपयोग नहीं हो रहा है। यदि सरकार यही कइती रहेगी कि यह जिम्मेदारी राज्य सरकार की है तो मैं निवेदन करूंगा कि केन्द्रीय सरकार भी इस उत्तरदायित्व से बरी नहीं हो सकती।

किसी देश के बड़े होने के कई लाभ हैं। उस का सबसे बड़ा लाभ यह है कि देश के किसी कोने में यदि प्रतिवृष्टि हो या धनावृष्टि हो तो उस देश के दूसरे भागों में बचा हुआ धान्य उस जगह से जा सकता है। इस दृष्टिकोण से हमारा देश सौभाग्यशाली है कि वह बहुत बड़ा देश है किन्तु दुर्भाग्य से सरकार की गलत नीतियों के कारण इस एक देश के कई टुकड़े हो गये हैं। देश में दो दो बड़े राज्यों को मिला कर के कुछ इस प्रकार की क्षेत्रीय व्यवस्थाएँ बना दी गई हैं जिस के कारण प्रथम एक स्थान से दूसरे स्थान को वैधानिक रूप से नहीं ले जाया जा सकता। नतीजा यह होता है कि चोरबाजारी और छिपे छिपे घना ज के ले जाने की कार्यवाहियाँ हो रही हैं। हम चाहे जितने जागरूक हों, हमारी सरकार का पुलिस विभाग भी चाहे जितना जागरूक हो, लेकिन वह सब के सब चोरों को नहीं पकड़ सकता है। नतीजा यह होता है कि एक स्थान पर जहाँ बीब के घोर मझोले लोग ज्यादा नफा उठाते हैं उस में घन्न के अन्न में प्राणिक रूप से वृद्धि हो जाती है।

खेतों की खरीद के एकाधिकार का तरीका भी खतरों से खाली नहीं है क्योंकि, भूअभेद के साथ कहना पड़ता है, हमारे देश में औद्योगिक उत्पादन के लिये घोर औद्योगिक विकास के लिये जितना महत्व दिया जा रहा है उतना दुर्भाग्य से कृषि उत्पादन के लिये नहीं दिया जा रहा है। इस का परिणाम यह है कि किसान की हासत उत्तरांतर खस्ता होती जा रही है। यदि किसान को अपनी भूमि पर, अपनी कृषि पर उपयुक्त और

पूरा लाभ नहीं मिलता तो उस की खेब कृषि में नहीं रहेगी और उस का परिणाम सारे देश को भोगना पड़ेगा।

आप ने नीति निर्धारित की कि देश में भूमि को अधिकतम सीमा निश्चित कर दी जाये। राजस्थान में इस सीमा निर्धारण से पहले सरकार की धोर से एक इशर प्रकार का सर्वेक्षण हुआ था जिस के द्वारा यह प्रतिवेदन प्रस्तुत हुआ कि राजस्थान में इस प्रकार के किसी भी प्रतिनियम की आवश्यकता नहीं है और भूमि की अधिकतम सीमा निश्चित करने की कोई आवश्यकता राजस्थान में नहीं है। लेकिन सरकार की धोर से यह बताया गया कि क्योंकि योजना प्रायोग ने इसे एक राष्ट्रीय नीति के रूप में निश्चित कर लिया है इसलिये अधिकतम सीमा का निर्धारण अनिवार्य है। श्रीमन्, जब किसी किसान पर भूमि की एक अधिकतम सीमा निर्धारित हो गई तब उस के बाद जो उस के स्वामित्व का बोझ उस जमीन पर पड़ेगा और दबाव पड़ेगा उस के कारण उस भूमि से उत्पादन की क्षमता बढ़ती जायेगी और भूमि से प्राप्त होने वाला लाभ धीरे धीरे बढ़ते हुए समाप्त हो जायगा। यदि खरीद का एकाधिकार सरकार को दिया जाता है तब उस समय किसान के पास में और कोई विकल्प नहीं है कि यह अपना एक निश्चित जो लाभ है उस निश्चित लाभ के अन्तर्गत अपने धन को बेच डाले। मैं यह निश्चय पूर्वक कहता हूँ कि इस देश में नारे तो किसान के बारे में बहुत कुछ लगाये जाते हैं लेकिन किसान और कृषि इस देश में बहुत उपेक्षित रही है। मैं नहीं जानता कि अब इस तरह के धन संकट के बाद में यही स्थिति बनी रहेगी लेकिन अब तक किसान उपेक्षित रहा है और शहर और गांव का भेद इतना बढ़ गया है कि कोई भी घादमो गांव में रहना इतना पसन्द नहीं करता जितना कि शहर में रहना पसन्द करता है और उस का मुख्य कारण यह है कि भूमि से

होने वाली घोर रोजगार घन्टों से होने वाली घामदनी में या शहर में नोकरी या दूसरे व्यवसाय से जो घामदनी होती है उस में बड़ा अन्तर है। शहरों का आकर्षण इतना बिलक्षण और इतना गहरा आकर्षण है कि जिस के कारण गांव एक तरह से खाली से हो रहे हैं, गांव एक तरह से अर्धतः त से हो रहे हैं। उद्योग और कृषि का भेद ही वास्तव में इस के मूल में है और यदि सरकार इस समय अन्न के वितरण में भी, राजन में भी इसी भेद को जीवित रखना चाहती है तो बलिहारी है इस सरकार की। श्रीमन्, गांव का आदमी और शहर का आदमी एक ही देश का नागरिक होने के नाते अपने स्वभाव में, और अपने अोजन की पद्धति में कोई विशेष अन्तर नहीं रखता लेकिन हमारे प्रशासक ऐसे भी हैं और मैं विशेषकर अपने जिले का उदाहरण दूंगा कि जहां गांवों में गेहूं नहीं जाता केवल शहर के लिये ही गेहूं है। मैं मानता हूँ कि गांवों में बहुत से लोग बिना गेहूं के चला सकते हैं किन्तु इस का अभाव यह नहीं है कि गेहूं की बिल्कुल ही वहां आवश्यकता नहीं है। यदि हमारी राजन पद्धति में भी गांव और शहर का हम भेद बनाते हैं तो फिर हम किस रूप में पर यह उम्मीद करते हैं कि हमारा कृषक इस देश को बतवान और मजबूत बनाने में सहाय्य दे सकेगा।

श्रीमन्, अभी हमारे प्रधान मंत्री महोदय ने बड़ा आकर्षक नारा दिया है—जय जवान, जय किसान का। अच्छा होता कि आज के समय में सिपल्ली को और किसान को एक बराबर स्थिति में रखते, नारे के रूप में नहीं बल्कि व्यावहारिक रूप में। एक उदाहरण मैं देना चाहता हूँ। रिहन्द का एक सरकारी बिजलीघर है जहां से एल्पुमिनियम फैक्ट्री का उद्योगपति बिजली के एक यूनिट के लिये केवल तीन पैसे देता है जब कि हमारा किसान जिस के लिए हमारे प्रधान मंत्री जय जवान और जय किसान का नारा देते हैं, उस को 19 पैसे प्रति यूनिट देना पड़ता है। . . (स्वच्छाण) आज ही प्रखोत्तर के समय में सिबाई यंत्री

ने बताया था कि हम ने ऐसा कोई आश्वासन नहीं दिया था कि उद्योगपतियों को दी जाने वाली बिजली और किसानों का दी जाने वाली बिजली की दर में समानता रखी जायेगी। आश्वासन नहीं दिया गया था कि भी कोई विशेष बात नहीं है और यह आश्वासन आज भी नहीं होगा, और प्रविष्टि में भी नहीं होगा। केवल इतना सा बताया गया कि हम उन को सहायता कर सकते हैं। मेरी समझ में नहीं आता है कि औद्योगिक उत्पादन के लिये जब आप एक उद्योगपति का तीन पैसे प्रति यूनिट दे सकते हैं तो किसान को देने में क्या घटबटन पड़ती है और यदि घटबटन पड़ती है, नहीं दे सकते तो फिर किसान का नारा, जय जवान और जय किसान का नारा व्यावहारिक बातों पर खड़ा हुआ नहीं बल्कि यह केवल एक तरह का ऊपरी और दिखावा मात्र है।

श्रीमन्, समय के प्रभाव में मैं बहुत ही संक्षेप में अपनी अन्तिम बात कहता हूँ। 1956 में हम ने पी०एल० 480 के मुताबिक 7 मिलियन टन का समझौता अस्थायी तौर पर इसलिए किया था कि हमारी निकट भविष्य में स्थिति सुधर जायेगी लेकिन सन् 56 के बाद से लगातार आज तक ड्रोपदी के बीर की तरह से यह बढ़ती जा रही है और इस के डकने की कीर्ति संभावना नहीं है। मेरा मतलब यह नहीं है कि इस को बन्द कर दिया जाय। परन्तु जब तक हम व्यापक रूप से काफी सिबाई के साधन उपलब्ध नहीं करते तथा इस सम्बन्ध में बहुत यत्नवाली और प्रभावशाली कदम नहीं उठाते, जब तक किसान की हासत सुधारने के लिए भूमि पर उस के स्वाभिव्यक्त का अधिकार अधिकार के सत्रहवें संशोधन द्वारा जो कर दिया गया है, वह अधिकार उस को नहीं दिया जायगा, उस को सहायता और तरीकों से नहीं मिलेगी तथा हम चाहे जितना ही बीर लगायें अन्न की समस्या ठीक होने की सम्भावनाओं हमारे यहां बहुत ही कम है।

श्री के० डे० मालवीया (बस्ती) : मिस्टर डिप्टी स्पीकर, सर

श्री हुकम चन्द कछवाय : हिन्दी प्रच्छी जानते हैं प्राप तो ?

श्री के० डे० मालवीया : उम्मीद है जी, कम मैं ने बहुत धीर से प्रपने मित्र मुकेशदास साहब का बयान यहाँ सुना। कई बार पहले भी पिछले सालों में ऐसी ही समस्या खाने की हमारे सामने रही। तब भी ऐसे ही सुनने का मौका मिलता था और हम सब को चाहिये भी कि हम उन के बयानों को बहुत गौर से सुने। क्योंकि वह जिम्मेदार बतलव्य है, संविधान के बाद हमारे सामने इस प्रबल में रखा जाता है और उन के विशेषज्ञ उन्हें सही मानने में सलाह भी देते होंगे। उन्होंने खाने की एक बड़ी खतरनाक तस्वीर हमारे सामने रखी है।

Mr. Deputy-Speaker, the gloomy picture really has caused great concern to us, more especially because it has come from our Minister . . .

Dr. L. M. Singhvi (Jodhpur): It is unfair for him to draw applause when he speaks both in Hindi and in English alternately.

Mr. Deputy-Speaker: That is for the Members.

Shri K. D. Malaviya: Is there anything wrong in my speaking both in Hindi and in English?

श्री हुकम चन्द कछवाय : हिन्दी बड़ी मीठी लगती है प्राप को।

उपाध्यक्ष महोदय : दोनों मीठी है।

श्रीमती लक्ष्मीकास्थाम्मा : हिन्दी में ही कहिए न।

Shri K. D. Malaviya: I have only ten minutes at my disposal. As I said, more especially when such statements have come from our able Minister,

it should cause us great concern. He is one of our ablest Ministers and therefore, whatever comes from him, deserves our great consideration and attention.

Shrimati LakshmiKasthamma:

When we are thinking of depending more and more on ourselves, why should he speak in English?

Shri K. D. Malaviya: I wish to assert my right to speak in English. I do not wish to underestimate or take a very light view of the situation that confronts us by referring to personal aspects of things. I told him yesterday that a report of a speech of mine made in Nagpur was incorrectly reported in the press where it is said that if Shri Subramaniam was replaced by a man like me, I would perhaps solve the food problem. I wish to inform my friend that I never made such a statement because I do not take a light view of the serious situation that confronts us. I know that we have come to a situation where it is no use our repeating details of implementations and the problem of irrigation, fragmentation of holdings, consolidation of land and this and that now. We have reached a stage when perhaps Shri Subramaniam, myself and some other friends who might think that we can solve the problem, all put together and circumscribed by the limitations of the framework under which our Government is working today, will not be able to solve this food problem.

Year in and year out we have been hearing the same arguments, the answers, charges and countercharges, complaints, allegations, of our inability to do a thing and all that. Almost all these speeches could have been made ten years earlier, and the same replies could have been given ten years earlier. Therefore this effort to strike a middle course has proved a failure, is going to prove a failure, and will always meet with failure, so long as we are not deeply conscious of the fact that we have to examine

and revise our working policies, and implementation, in a more basic way. I personally feel that the middle-course way will not do for us. Perhaps even Shri Maaani, who represents an extreme view and is diametrically opposed to the views that are held by men like me, may have some relevant purposive directions to put before us.

Shri Shukre (Marmagao): They advocated collective farming.

Shri K. D. Malaviya: He may not succeed, he will not succeed I know, but sometimes I feel that we are getting chances and losing time in following the middle course. State trading and private trading, procurement and no procurement, co-operatives and joint-stock companies, ceiling on land and no ceiling on land, concession charges of electricity to agriculturists versus concession charges of electricity to industrialists, community development is a good thing versus community development is a bad thing—all these things are going on, and I can multiply the examples and illustrations, and will have come to the conclusion that there is something seriously wrong in our thinking, and I should take courage to state this fact here that unless we revise our thinking, we are not likely to succeed.

Shri A. P. Shrama: Is it about food?

Shri K. D. Malaviya: I am referring to the question of food. I agree that there has to be no doctrinaire approach about the problem of food. On the question of import of foodgrains through the P. L. 480 arrangement I do not wish to say anything, except to refer to certain views expressed by some American friends who are well-wishers of this country, who are not particularly opposed to the socialist pattern of society that some of us wish to propagate here, although they might be opposed to my own particular specimen of the socialist programme. Even they have come to the

conclusion that, indefinitely, such sort of continuous aids are not likely to do good to the agricultural programme of production of this nation. Therefore, I feel that this dependence on PL 480 and the manner in which certain sections in the government are contemplating today is grossly unjust and inconsistent with the slogans raised recently after the Indo-Pakistan conflict-slogan of self-reliance. Either we wish to go ahead with the programme and strategy of self-reliance and take courage and face the better consequences of it for sometime in a transitional way or we do not repeat this slogan. There is generally no harm in the programme of importing foodgrains from abroad. I wish to state that we have failed to increase production in our country because of certain basic reasons. So long as our production per unit of land is lower than the lowest in the world, I object to the fundamental strategy of this nation to depend upon importing food through PL 480. Even the American friends will agree with us that this continuous and unlimited way of depending upon PL 480 to bridge over temporary difficulties is not good for us. Therefore, this slogan of self-reliance came to us at a very proper time. I regret to say that the statements made by certain sections of the government with regard to the import of food and the desire of certain ministers and certain sections of the Planning Commission are contrary to the spirit of self-reliance. It is time that we made up our minds on this. If we follow the socialist principles to which we are dedicated and committed in the great political party to which we all have the honour to belong, and if we implement these socialist principles, I have no doubt that this problem of food will be solved. But if we do not follow these principles and do not implement them and keep them before us as our targets and objectives to be followed at some more convenient time or think that we can do it when we are strong enough to do them, then to that extent our food production programme will be diluted.

[Shri K. D. Malaviya]

and we will go on indefinitely trying to catch up with our objective, but we will never catch up with it. We are unprepared for the proper distribution of food and we shall continue to be like that so long as we leave the initiative to others. It is regrettable that we are not prepared to take the lead to create an organisation for proper distribution. The statistics put before us will not help. My hon. friend said yesterday that rains have failed up very badly; according to him, perhaps never in living memories it was so. I do not know if the the situation is really so gloomy. With regard to the last kharif crop in the nothern part of India, the situation certainly does not appear to be gloomy from the facts that I have. In an entire district near my constituency responsible people have told me that they had produced maize in the last karif and have no recollection of such an abundant crop in living memory. I am referring to the district of Gonda where maize had been produced in an abnormally satisfactory way. In the western part of my State, I enquired from my colleagues here in Parliament, from Members of Parliament, and they tell me that the last rabi crop, was very good; maize was good; the kharif crop was good. Even in my own district which was considered to be poor, the earlier rice crop was very good. So, to maintain that the prospects are abnormally bad, black, and never as they were, is wrong and this assessment might have to be revised.

With regard to rainfall also, I do not think we are organiaationally spread over in that satisfactory manner throughout the country, that we can get the correct assessment of rainfall. In the same State, in one region of the State, there are different reports coming about the satisfactory or the unsatisfactory nature of the rainfall. What is, therefore, necessary is to go deep into the basic reasons. For instance, as the Chief

Minister of West Bengal has done, to which my hon. friend referred yesterday, which makes us very happy: that he has given preference to the tillers of the soil over the owners of the soil. According to the latest revised rates in West Bengal, the tillers of the soil will be getting 60 per cent share of the produce, even though they may not supply the bullocks or produce the seeds. So, land reform, and a proper and a better organisation for distribution, are the two big factors which can substantially take us ahead towards the objective that we have before us with regard to the increase of food production.

These 88 million tons of food may have been produced or may not have been produced. Even if you are going to import five to six million tons of food, it will not make much difference. The problem of maldistribution will remain as it is, even if you import food. We have imported food in the past years more or less according to our satisfaction. But still, the prices were always going up. There are some other elements which should go to meet the challenge of this price rise and the scarcity of food. It is not only the lack of techniques which has come in the way, but our inability to follow the policy which has been declared by us.

I will refer to one more point. This is about the joint stock companies, which is the latest thinking of some of us in order to produce better seeds for dissemination. You know that there are thousands of State farms in this country. What are these thousands of State farms doing? And why have they not succeeded? There was no dearth of finance, there was no dearth of technical assistance; there was no dearth of technicians and experts and no dearth of resources. I do not think there is any single unit which possesses more power and influence than the unit of Government; if the Government did not succeed in producing better type of seeds, how do we think that a joint stock company, even though managed by a very big indus-

trialist, can do this thing. Are we going to change our policy? If we are going to do this, why have you started by favouring the industrialist? Why do we not start from the revival of the old zamindari system? Let them come; let us trust those people who know these things. A known enemy is easier to deal. Let us go back; I say this cynically; I admit. But I do not see any reason, any wisdom, in handing over our lands to a group of people who have no experience except of profiteering, evading income-tax and importing talents from abroad in order to make personal profit and earn selfish glory. It will be a thousand shame for a Government of this country—whether it is the State Government or the Central Government—if they are unable to produce better seeds from their own State farms, than to hand over the lands to the big peasant proprietors, to individual industrialists or joint stock companies in order to produce seeds. I think it is a wholly erroneous idea. I would warn the Government not to repeat those mistakes. Otherwise, we will not be able to do anything.

Only one word more, and I shall finish. My hon. friend Shri Hanumanthaya referred to aid with or without strings. It is, I beg to state, wholly irrelevant to the issue before us. He talked of food production on a war footing. This is also a slogan, without understanding. It has been going on for years. If you implement the programme of production on a "war footing", you may have to take over land or you may have to expropriate land; you will have to introduce radical changes and transform your "means" in a big way, which you are not prepared to do; therefore, either we are to follow a socialist programme in a radical way, anticipating the crisis that confronts us, or, we go by this slogan of "food production on a war footing". We have to change ourselves including our thinking in a big way. We hesitate to it and then talk of "aid without strings", "aid with strings" and so on. It is wholly irrelevant. What is necessary is, if we are really

serious about the self-reliant spirit which we want to spread, then we have to so adjust our national policy, international policy, as to be in tune with the socialist programme which we have set before us with regard to the ownership of land, ownership of property and management by public institutions. We have to change the whole condition and create a completely new complex of condition before us which will be the starting point for the realisation of all those dreams which we have been seeing from such a long time.

श्री लहदन चौधरी (सहरसा) :
उपाध्यक्ष महोदय, देश में भनाज की दिक्कत है और इस लिए भनाज के उत्पादन का बढ़ाने की जाँची कीजिए। भनाज सम्भव हो यह करना है, इस में कोई राय नहीं है। मैं सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूँ कि इस के सम्बन्ध में जो सीरियसनेस ऊँचे स्तर पर है, वही सीरियसनेस सरकार के निचले स्तर पर भी भनाज जरूरी है। जो नीचे के स्तर के सरकारी कर्मचारी हैं, उन में भी दक्षता की आवश्यकता है, सीरियसनेस की आवश्यकता है, ताकि सामान समय पर मिल सके और जो पैसे इस काम के लिए दिये जाते हैं, उन का समय पर सही उपयोग हो सके। हमारा अनुभव है कि म्लार्कों में चावल इरिगेशन के लिए जो पैसे दिये जाते हैं, उन का अधिकांश भाग: सरलर दुष्प्रा करता है, क्योंकि उन के यूटिलाइजेशन के लिए जो कुछ सीरियसनेस चाहिए, वह कहीं बीजनी नहीं है। जब तक इन बातों में सुधार नहीं होता, तब तक केवल ऊपर के स्तर पर सीरियसनेस में काम नहीं चल सकता है।

मैं मंत्री महोदय का ध्यान मुख्य निबंधन और वितरण की नीति की तरफ दिलाना चाहता हूँ। मैं ने हाल ही में कुछ आंकड़े कहीं रखे थे और मैं आज सदन में

[श्री तहटन बोधरी]

वे प्राइस इन्फ्लेक्शन बाहता हूँ और मैं बाहता हूँ कि फूड मिनिस्टर इस बात पर विचार करें कि यह स्थिति क्यों पैदा होती है।

1961-62 का वर्ष रिकार्ड पीयर आफ प्राडक्शन माना जाता है सरकारी प्रांकड़ों के मुताबिक बताया गया है कि 1962-63 में वह प्राडक्शन बहुत घास तक गिर गया, लेकिन सरकारी प्रांकड़ों के मुताबिक 1963-64 में 1961-62 से भी सीरियल्स का उत्पादन ज्यादा हुआ। जहाँ तक 1962-63 का सवाल है, 1963-64 में उस से डार्ड मिलियन टन बेशी सीरियल्स की उपज हुई, यानी 1963-64 में 1962-63 से 4 प्रतिशत अधिक उपज हुई। जहाँ तक घायात का सवाल है, बाहर से घायात किये गए घनाज में 1963 की तुलना में 1964 में 38 परसेंट की वृद्धि हुई। मैं मानता हूँ कि होल प्राडक्शन पर 38 परसेंट का इम्पैक्ट नहीं पड़ेगा, लेकिन जो भी इम्पैक्ट पड़े, वह बात सब है कि 38 परसेंट ज्यादा घनाज मंगाया गया। लेकिन प्राइस इन्डेक्स बिल्कुल विपरीत दिशा में गया है। प्राइस इन्डेक्स 1963 में 112 था और 1964 में वह 134 हो गया। हम यह उम्मीद कर सकते थे कि जब सरकारी प्रांकड़ों के मुताबिक घनाज घायात ज्यादा हुआ और घनाज की उपज ज्यादा हुई, तो प्राइस इन्डेक्स घटना चाहिए था, या कम से कम उस जगह पर रहना चाहिए था, जहाँ वह 1963 में था, लेकिन उल्टे वह 20 परसेंट ज्यादा चला गया, यह क्यों? मुझे याद है कि जो 1969 में सरकारी क्वॉटिटी हुआ था उपज के बारे में तो कहा गया था कि सन् 1961-62 के रेकार्ड इयर से ज्यादा होने की सम्भावना है। मैं कहना चाहता हूँ कि कितने ही उस के प्रांकड़े क्यों न धाये हों लेकिन सन् 1965 के सितम्बर

का जो प्राइस इन्डेक्स है वह 143 चला गया था यानी सन् 1964 से 30 परसेंट ज्यादा। मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसा क्यों हुआ है। इस के दो ही कारण हो सकते हैं। या तो प्रांकड़ों का सिलसिला गलत है और हम गलत प्रांकड़ों पर कहीं पहुँचते हैं या तो यह मानना पड़ेगा कि होडिंग है, ब्लैक मार्केट है और सरकारी नीतियों में कहीं न कहीं गलतियाँ हैं वितरण के सिलसिले में और कंट्रोल के सिलसिले में जिस के कारण इस तरह की स्थिति पैदा होती है।

मैं समझता हूँ कि बहुत घास तक हमारी नीति थी इस मामले में दखल देती है और इस के लिये बही जिम्मेदार है। उदाहरण के तौर पर मैं कहना चाहता हूँ कि प्राइस सपोर्ट एक अच्छी चीज है और आवश्यकता है इस बात की कि किसानों को प्राइस सपोर्ट दिया जाये ताकि उसे इन्सेन्टिव मिले। इस में कोई शक की बात नहीं है। लेकिन मेरी मान्यता है कि सरकार ने उस बल प्राइस सपोर्ट की पॉलिसी शुरू की सन् 1964 में जब कि टेन्डेन्सी प्राइस राइज की थी। इस का नतीजा यह हुआ कि सन् 1965 के शुरू से ही जो प्राइस लेवल प्राइस सपोर्ट का तय किया था उसे नहीं रक्खा। उसे उतने छुड़ा ही नहीं, बहुत आगे आगे भागता गया। जब टेन्डेन्सी प्राइस नीचे गिरने की हो तब हम प्राइस सपोर्ट कर सकते हैं, लेकिन जब टेन्डेन्सी बढ़ने की हो और मूल्य ऊँचे हो रहे हों तब प्राइस निश्चित करने हुए हमारे लिये जरूरी होता है कि हम मॉक्सिमम प्राइस तय करें और उस पर प्रमल करें। सरकार ने उसे किया लेकिन हार मान नी, उस पर प्रमल नहीं किया। नतीजा यह हुआ कि देश को इस तरह का घाघास मिला कि प्राइस ज्यादा बढ़ेगी, बड़ी कमी है देश में सारी चीजों की और इस लिये

सरकार ने मिनिमम प्राइस ठीक किया, मॅसमम प्राइज लेवल सरकार ने छोड़ दिया इतना ही नहीं हुआ, जो सरकारी घनाज की सप्लाई होती थी उस के भाव भी बढ़ाये गये फेअर प्राइस प्राप्स में। इस तरह से पैसे की बचत हुई लेकिन देश की मनोबृति क्या हुई। देश ने समझा कि सचमुच ही बड़ी मुसीबत घाने वाली है क्योंकि देश की सरकार ने प्राइस को बढ़ाया है। नतीजा जो हुआ वह घाप ने देख लिया कि प्राइस बढ़ती चली जा रही है।

एक बात धीर भी हुई जो कि दिल को चोट पहुंचाने वाली है। सरकार की नीति है कि बड़ी मिल्स या राइस हल्किंग मिल्स को चलाने की इजाजत सब जगह दी जाय, शहरों में भी धीर देहातों में भी। लेकिन जो छोटे हलस हैं उन पर हम ने रूकावट डाल दी। जो हलस छोटे हलिंग वाले होते हैं उन की इतनी कैपसिटी नहीं होती कि वह होई कर सकें। वह दिन भर घपने घनाज की हलिंग करते हैं धीर शाम को उसे बेच देते हैं क्योंकि घगले दिन के लिये उन को कैपिटल चाहिये। लेकिन बड़े मिल वाले जो होई कर सकते हैं, जो हम से छिया कर रख सकते हैं उन्हें घाप ने इजाजत दी कि वह घपनी मिल्स चलायें। छोटे हलस को हम ने बन्द किया। मैं मानता हूँ कि इन दोनों तीनों चीजों ने एक कारण का रूप लिया है इस घनाज के भाव बढ़ने में। मैं घ्राइह कस्ंगा कि हम को इस नीति पर गम्भीरता पूर्वक बिचार करना चाहिये।

इस सम्बन्ध में दो ही तरीके हो सकते हैं। या तो हम मैक्सिमम प्राइस तय करें धीर कह दें कि इस से ज्यादा हम नहीं चलने देंगे चाहे जो भी करना खड़े। लेकिन हम लोगों में यह हिम्मत नहीं है, या हम समझें कि हम इस को नहीं चला सकते हैं तो फिर दूसरा तरीका है कि हम घपना बफर स्टॉक

कायम करें जिस से हम बाजार को कन्ट्रोल करें। लेकिन जो तरीका बफर स्टॉक का चल रहा है उस से काम नहीं चलेगा। इस में काफी गलतियाँ हो रही हैं। मैं इस के डिटल में नहीं जाना चाहता, लेकिन मैं ने कई स्टेट्स में देखा है कि उन्होंने जो नीति प्रक्यार की है उस से काफी घनाज नहीं घा सकता है। मैं इस के भी उदाहरण दे सकता हूँ। घाज भी देहातों के बीच में दो बातें चल रही हैं। एक तरफ तो बड़े बड़े पूंजीपति, बड़े बड़े व्यापारी काफी भाव पर घनाज खरीद रहे हैं धीर घाप ने छूट दी है कि जो जिस भाव पर चाहे खरीदे, दूसरी तरफ घाप लेबी करते हैं कि इस भाव पर हमें दो। यह दोनों चीजें साथ साथ चलने वाली नहीं हैं, धीर धगर यह चलेंगी भी तो बहुत सीमित घंश में। घाप का उद्देश्य कभी भी इस तरह से पूरा नहीं हो सकता है। इसके साथ ही हम देखने हैं कि जो गरीब लोग हैं, जिन के पास दो बीघा या चार बीघा घान है वह घपने घान को 12 ५० मन या 13 ५० मन के हिसाब से एडवान्स पर बचते चले जा रहे हैं। उन्हें पूंजीपति लोग थोड़े पैसे देते हैं पेशगी के तौर पर धीर सारा घान खरीद लेते हैं। धरकार ऐसा नहीं करती। न तो वह पेशगी दे कर घान खरीदने की कोशिश कर सकती है धीर न मैक्सिमम प्राइस दे कर दूसरा घादमी न खरीद सके ऐसा कायदा रख कर लेबी कर सकती है। दोनों में से कोई चीज नहीं हो रही है। मैं कहना चाहता हूँ कि धगर घाप को घपना बफर स्टॉक बढ़ाना है तो घाप को यह स्पष्ट करना चाहिये कि या तो घाप घांपन मार्केट में जाइये या फिर जो घाप ने लेबी रखी है उसको पूरा कीजिये लेकिन रिजनेबल इंग से कीजिये, दूसरों को खरीदने से रोकिये। धगर घाप उन को नहीं रोकियेगा तो घाप को कुछ घिजने वाला नहीं है।

इसके साथ ही साथ घाप को एक धीर कोशिश करनी चाहिये। घाप के पास

[श्री सहटन चौधरी]

बहुत बड़ी सेना है थी० डी० भोउ० की प्रौर दूसरे लोगों की । आप उन को काम पर लगा दीजिये । लोगों को एडवान्स दीजिये स्टैंडिंग क्रॉस के प्रमेन्ट में छोटे किसानों को प्रौर समय पर धान वसूल करने की कोशिश कीजिये । अगर आप ऐसा करेंगे तो मैं समझता हूँ कि आप बहुत बड़ा बफर स्टॉक कायम कर सकेंगे । इन शब्दों के साथ मैं अपनी बात समाप्त करता हूँ ।

Dr. L. M. Singhvi: Sir, while we are glad for the speech that the hon. Member made, what intrigues us is the invisible way of the presiding eye, now the hon. Member sitting behind the pillar was able to catch your eye. I am not objecting to it.

श्री सू० ल० वर्मा (पीतापुर) :

उपाध्यक्ष महोदय, हमारी सरकार कृषि के मामले में बिल्कुल फेल हो चुकी है । सरकार ने केवल फागजी घोड़े ही दीड़ाये हैं प्रौर कभी भी इस समस्या पर ठीक से विचार नहीं किया । आज भी हमारी सरकार यह कहती है कि सिन्ध का प्रबन्ध किया जायेगा प्रौर बड़े बड़े तगताव प्रौर कुएं आदि छोड़े जा रहे हैं । लेकिन सरकार की मशीनरी इसका सारा खया खा कर बैठ गई है । ऐसी हालत में मैं यह मानने के लिये तैयार नहीं हूँ कि सरकार का इरादा बिल्कुल सही तौर से खर्च करने का है ।

जब अभी हाल में भारत ने पाकिस्तान से लड़ाई लड़ी थी तो उस के दमर्शन में अमेरिका ने भारत को बर्गिंग दी थी । कि अगर भारत पाकिस्तान से लड़ाई करेगा तो वह कतई भारत से अलग हो जायेगा प्रौर यहाँ तक कह सकते हैं कि हम गेहूँ नहीं देंगे । इसलिए सारा भारत भूखों मर सकता है । ऐसी हालत में हमारे देश की जनता ने यह निश्चय किया कि हम एक दाना भी अमेरिका से लेने के लिए तैयार नहीं हैं बल्कि यहाँ तक तय किया कि हम उधर देखने को भी तैयार नहीं हैं जबकि हमारी सरकार ने जनता के

साथ धोखा किया है प्रौर अमेरिका के सामने हाथ फैलाया । अमेरिका की सरकार के अधिकाधिकारियों ने यह कहा कि हमारी एक शर्त है । यह शर्त अगर आप मानें तो हम गेहूँ देने के लिए कतई तैयार हैं । हमारे खाद्य मंत्री यह शर्त मानने के लिए तैयार हो गये हैं । ऐसी हालत में जबकि अमेरिका यह जानता है कि भारत अब अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है प्रौर खड़ा होभा । उसमें यह शर्त रखी गई है कि भारतीय जो योजना है वह अमेरिका के योजना प्रायाम के सामने लायी जाय, इसकी वह जांच करे, ऐसा बताया जाता है । हमें डर है कि कहीं ऐसा है कि हमारे खाद्य मंत्री महोदय ने यह बात मान ली । अब हमें इस बात के लिए भय है कि अमेरिका हमारे देश को बंजर न बना दे जिससे देश की हालत प्रौर बिगड़ जाय प्रौर दूसरे देशों के सामने हाथ फैलाना पड़े । इससे देश तबाह हो सकता है जैसे कि एक भेड़िये को बफरी सौंपना हो जाय । मैं यह नहीं चाहता प्रौर मैं खाद्य मंत्री जी से प्रौर प्रधान मंत्री जी से निवेदन करूंगा कि वह यह बात न मानें ।

दूसरी बात यह है कि हमारे देश में खास तौर से तीन बीजों की बड़ी कमी है जो आज तक सरकार पूरी नहीं कर पाती है । एक तो है बेरोजगारी, दूसरी है गल्ले की कमी प्रौर तीसरी है सेना, सेना की भी कमी है । ऐसा है कि हमारे देश की जनसंख्या बहुत बढ़ती जा रही है प्रौर किसान जो खेतिद्वर किसान है जो अपने हाथ से खेती करते हैं उनकी संख्या बहुत ही कम होती जा रही है । इसका मतलब यह है कि देश के सभी किसान प्रौर मजदूरों के बच्चे, हर छादमो के बच्चे स्कूलों में पढ़ने जाते हैं प्रौर वहाँ खास तौर से किसान के बच्चे 70 फीसदी, ज्यादा पढ़ नहीं पाते, बाकी नहीं, दसवीं फेल होकर बैठ जाते हैं प्रौर वे कुछ नेतागिरी के बफर में पड़ते हैं प्रौर कुछ दफ्तरों प्रौर आफिसों के बफर तायने

लग जाते हैं कि उन्हें कहीं नौकरी मिल जाय । ऐसी हालत में नौकरी तो मिल नहीं पाती क्योंकि वह पढ़े लिखे नहीं हैं । इसलिए वह अपने घर की भी पूंजी खत्म करके बिलकुल बेकार हो जाते हैं । ऐसी दशा में मैं सरकार को यह बताना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान के अन्दर प्रान्तों में तथा जिलों में जो ग्राम समाज की सकड़ों क्या हजारों एकड़ जमीन बेकार पड़ी हुई है, बंजर पड़ी हुई है, उनको खेती के काम में साधे और उसके लिए एक योजना बनावे जिसमें कि वह किसान के नवजवान बच्चे, मजदूर के बच्चे, उनको लाकर उनसे खेती करायी जाय, उनको सेना की ट्रेनिंग दी जाय । वह ट्रेन्ड होंगे तो हमारे देश की रक्षा करेंगे । खाद्य की स्थिति भी इससे सम्बन्धी और बेकारी भी दूर हो सकती है । इसलिए मेरा सरकार से नम्र निवेदन है कि वह खास तौर से इस पर गौर करे । हमारे देश में अभी तक सरकार ने न अच्छे बीज का इन्तजाम किया है और न समय पर पानी देती है । बल्कि पानी की बढ़ी ही कमी है । खाद की समस्या है । खाद भी नहीं दे पाते । अभी हाल में पिछले वर्षों फसल बहुत ही अच्छी हुई थी । गेहूँ बहुत अच्छा हुआ । लेकिन बीज की खास तौर से देखभाल न करने के कारण हमारे उत्तर प्रदेश में पंजाब का बीज दिया गया जिसकी देखभाल नहीं की गई । जो बीज दिया गया उसका उत्पादन किया गया । गेहूँ की फसल बढ़ी अच्छी हुई । लेकिन उसमें जब गेहूँ की बाली निकली तो बालियों के अन्दर एक महीन महीन से छोटे छोटे से दाने काले रंग के पैदा हुए जिनको हमारे यहां जहर कहा जाता था । मैंने वह बालियों सहित लाकर के प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री के सामने पेश की थी और उन से प्रार्थना की थी कि यह बालियां प्राय जांच के लिए भेज दें । हमारे यहां के लोग इसको जहर कहते हैं । उनमें मुझे पता नहीं क्या हुआ ।

पानी की खास समस्या है । पानी समय पर नहीं मिल पाता और खड़ी फसलें,

तैयार फसलें, बगर पानी के सूख जाती हैं । जहां पर पानी है वहां भी पानी नहीं मिल पाता । सरकार की मशीनरी बिलकुल फेल हो चुकी है । मैं सरकार से यह पूछना चाहता हूँ और खास तौर से खाद्य मंत्री महोदय से कि सरकार की कौन सी ऐसी मशीनरी है जो कि सही ढंग से काम कर रही है ?

तीसरी बात यह है कि खाद भी नहीं मिल पाती । खाद ब्लाक से मिलती है और ग्राम प्रधान के रेकमेंडेशन के ऊपर मिलती है । हर गादमी को पता है कि गांव गांव में प्राय खास तौर से पार्टीबन्दी है । इसलिए पार्टीबन्दी या दुश्मनी के कारण या पैसे के लालच से खाद भी किसान को सही ढंग से नहीं मिल पाती ।

हमारे उत्तर प्रदेश में हमारी सरकार ने खेती बढ़ाने के लिए या यों समझ लीजिये कि किसानों को नेम्ननावृद्ध करने के लिए लगान बढ़ाया है और सरकार अपनी मशीनरी पर काबू नहीं पा रही है । लगान बढ़ा कर गल्ला अधिक उपजाओ योजना ऐसे बक्त पर नहीं चल सकती । यह लगान बढ़ा कर किसानों की घातमहत्या करना है । जबकि ऐसे संकट के समय में, ऐसे गिरानी के समय में हर बीज के बड़े ऊंचे दाम चढ़ते जा रहे हैं और सरकार उनको रोकने में असफल हो चुकी है तो ऐसी हालत में यह लगान बढ़ाना अनुचित होगा । जब हम यहां यह बात नाते हैं तो हमारी सरकार यही कहती है कि यह राज्य सरकारों का काम है, यहां से केन्द्र से कुछ नहीं हो सकता । मैं सरकार से यह कहना चाहता हूँ कि ऐसे समय में जब यह प्रश्न आता है तो वह भागने की कोशिश करती है, सरकार को चाहिए कि वह राज्य सरकारों को इस बात के लिए बाध्य करे और हिदायत करे कि वह ऐसे संकट के समय में टैक्स या लगान कलई न बढ़ाये और बचानी न करे । अभी हाल में मैंने उत्तर प्रदेश में देखा है कि धान पर 60 प्रतिशत गवर्नमेंट ने मांग की है

[श्री सहटन चौधरी]

धीर 60 प्रतिशत सेने के लिए भी कानून बनाया है। लेकिन मैं देखता हूँ कि ब्लेक मार्केटिंग करने वाले ही सब धान उठाकर रातों रात चावल बनाकर इधर उधर बिहार साइड में धीर बाहर भी इस तरह से भेज देते हैं लेकिन वहाँ सरकार की मनीतरी उनको पकड़ने में बिल्कुल प्रसमर्था हो चुकी है। ऐसी हातत में मैं सरकार से यह प्रार्थना करूँगा धीर कहूँगा कि इन बातों पर थोड़ा विचार करे जिससे कि हमारे देश की खाद्य स्थिति, सेना की कमी धीर गरीबी पूर हो सके। यही मुझे कहना है।

श्री हुकम चन्ध कल्याण : अध्यक्ष महोदय, मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि यह खाद्य समस्या इतने महत्व का विषय है कि इसको ध्यान में रखते हुए इस पर एक घंटा समय धीर बढ़ा दें। एक घंटे तक हम धीर बैठेंगे... (व्यवधान) मैं प्रस्ताव रखता हूँ कि 1 घंटा समय बढ़ा दिया जाय।

Mr. Deputy-Speaker: Now, we shall have to take up the half-an-hour discussion. If the Members are here and keep the quorum, we can sit for one hour more after the half-an-hour discussion is over.

Shri C. Subramaniam: I would like to submit that there is a Cabinet meeting today which I have to attend.

Shri A. P. Sharma: We are prepared to sit late. We want that more time should be given. We have approached the Speaker in a joint petition for the allotment of more time. We have also approached the Minister of Parliamentary Affairs. We are prepared to sit late, because the problem is so serious. If still you do not extend the time, we cannot understand.

Mr. Deputy-Speaker: The Food Minister has a Cabinet meeting to attend. If the House does not insist

upon the presence of the Food Minister and his Deputy can remain here, we can continue for one hour more after 5.30 p.m.

Some hon. Members: Yes.

Shri Somanam: This extra one hour may not be counted in the 18 hours allotted.

Mr. Deputy-Speaker: It will be counted.

17 hrs.

KERALA CULTIVATORS*

Shri Vasudevan Nair (Ambalappuzha): I have sought to raise this half-hour discussion on certain points arising out of a question on 24 November regarding the sorrowful plight of a few hundred families resettled in a place far away from their original place of residence. They are peasant families. The hon. Minister gave me a reply as follows:

"Government have received representations from the settlers pointing out their difficulties and asking for further concessions.

Proposals to give more bamboos and cadjan leaves, free supply of banana suckers, vegetable seeds etc. are under consideration of Government".

Through this half-hour discussion, I would like to highlight the tragic and sorrowful story of a few hundreds of our cultivator families in Kerala State. It has a background. I do not wish to take much time to elaborate all the details as far as the background is concerned. But I may briefly point out that this is not just a question of a few hundred families who are immediately involved. As a